thearyasamaj.org

ओ३म्
आर्य जगत्
कृण्वन्तो विश्वमार्यम्
रविवार, 05 अक्तूबर 2014 — आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र — सप्ताह रविवार 05 अक्तूबर 2014 से 11 अक्तूबर 2014
आ.शु. 11 ● वि० सं०–2071 ● वर्ष 79, अंक 128, प्रत्येक मंगलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 191 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,115 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

डी.ए.वी. नाभा में शिक्षक दिवस पर हुआ वृक्षारोपण

डी.ए.वी. सैंट पब्लिक (सीनियर सैकंडरी) स्कूल नाभा के परिसर में शिक्षक–दिवस का आयोजन किया गया। इस अवसर पर प्रधनाचार्या ने मुख्यातिथि के रूप में विद्यालय के चेयरमैन माननीय श्री एच. आर. गांधार जी (परामर्शदाता डीएवी कॉलेज मैनेजिंग कमेटी, नई दिल्ली) को सपत्नीक भी सादर आमंत्रित किया।

विद्यालय के प्रांगण में सर्वप्रथम यज्ञ करवाया गया। श्री रोहित आर्य जी ने यज्ञ का आरंभ विधिपूर्वक करवाया। यज्ञ में विद्यालय की प्रधानाचार्या, मुख्यातिथि तथा अन्य अतिथिगणों ने आहुतियाँ देते हुए हवन मंत्रों का उच्चारण किया। मुख्यातिथि जी के कर–कमलों से पूर्ण आहुति करते हुए यज्ञ का समापन किया गया।

मैं इस अवसर पर वनमहोत्सव का आयोजन भी किया गया जिसमें मुख्यातिथि ने वृक्षारोपण किया तथा अन्य अतिथियों के द्वारा (150) छायादार तथा अन्य गुलमोहर आदि पौधे आरोपित करवाए गए।

विद्यालय की अध्यापिकाओं ने डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन जी के जीवन परिचय पर प्रकाश डालते हुए उनके प्रति श्रद्धांजलि अर्पित की। इस विद्यालय के चेयरमैन माननीय श्री एच आर गांधार जी के कर कमलों से दिवंगत अध्यापिका श्रीमती अन्जू शर्मा के परिवार को डीएवी कॉलेज मैनेजिंग कमेटी, की ओर से डेढ़ लाख रूपए की शशि भेंट कर सहायता दी गई।

मुख्यातिथि जी ने अपने संबोधन में शिक्षक दिवस की हार्दिक शुभकामनाएं दी। उन्होंने सकारात्मक सोच रखते हुए एक योग्य शिक्षक बनने के लिए भी प्रोत्साहित किया। श्रीमती सुदेश गांधार जी ने कहा कि आज के छात्र अपने अभिभावकों व शिक्षको से दूर होते हुए तकनीक के अधिक नजदीक जा रहे हैं, हमें उन्हें अपने समीप लाते हुए उन्हें एक अच्छा इंसान बनाना चाहिए।

श्री विजय कुमार जी ने अपने भाषण में सभी शिक्षकों को शिक्षक दिवस की हार्दिक बधाई देते हुए उन्हें परिश्रम व लगन से अध्यापन करने की सीख दी।

प्रधानाचार्या श्रीमती मंजुला सहगल जी ने मुख्यातिथि, सहित सभी का डीएवी गान का सस्वर गायन के साथ कार्यक्रम का समापन हुआ।

बी.बी.के. डी.ए.वी. में 'स्वामी दयानन्द अध्ययन केन्द्र' द्वारा हिन्दी-दिवस पर हुई भाषण-प्रतियोगिता

बी.क. डी.ए.वी. कॉलेज फॉर विमेन, अमृतसर को यू.जी. सी द्वारा प्रदत्त **'स्वामी दयानन्द अध्ययन केन्द्र'** द्वारा हिन्दी पखवाड़े के अन्तर्गत 'हिन्दी–दिवस' के उपलक्ष्य में अंतर–विद्यालय और महाविद्यालयों के छात्र–छात्राओं ने महर्षि दयानन्द के समग्र व्यक्तित्व से संबंधित, हिन्दी भाषा हमारा गर्व, हमारी अस्मिता, नारी–शिक्षा और सुरक्षा, वर्तमान युग और नैतिक मूल्य आदि विषयों पर विचार प्रस्तुत किए। कॉलेज प्राचार्या डॉ (श्रीमती) नीलम कामरा ने उपस्थिति का

हार्दिक अभिनन्दन किया और कहा कि ''मैं यू.जी.सी का आभार व्यक्त करती हूँ कि उन्होनें हमें ऐसी योजना प्रदान की है जिस के माध्यम से हम महर्षि दयानन्द सरस्वती जैसे महान सामाजिक विचारकों के योगदानों की जानकारी अर्जित करते हैं और युवा–पीढ़ी उनसे प्रेरित होकर अपने जीवन–मूलयों और वैदिक शिक्षाओं से जुड़ी रहती है। आगे उन्होंने कहा कि हमें हिन्दी भाषा जिसे महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने आर्य भाषा (श्रेष्ठ भाषा) कहा उसका दिल से सम्मान करना चाहिए।

प्रतियोगिता में प्रो. (डॉ.) विनोद कुमार तनेजा (पूर्व अध्यक्ष, गुरू नानक देव विश्वविद्यालय, अमृतसर) प्रो. (डॉ.) मोहिन्द्र संगीता (डीन, अकादमिक, खालसा कॉलेज इंजीनियरिंग एण्ड टैक्नोलॉजी) और डॉ. इन्दिरा विके (अस्सोसिएट प्रो. आर, आर, बावा डी.ए.वी. कॉलेज बटाला) ने निर्णायक गण की भूमिका निभाई।

डॉ. अनीता नरेन्द्र ने कहा कि हिन्दी–भाषा जन–जन तक प्रेम का संदेश पहुँचाने वाली भाषा है और महर्षि दयानन्द ने इसी राष्ट्र–भाषा में अपने सत्यार्थ प्रकाश की रचना कर लोगों को जागृत किया। डॉ.शैली जग्गी ने निर्णायक मण्डली, प्रध्यापकगण, टीमों और उपस्थिति का हार्दिक धन्यवाद किया।

डी.ए.वी. विद्यालय जींद (हरियाणा) में मनाया गया शिक्षक दिवस

डी.ए.वी. विद्यालय जींद में अध्यापक दिवस हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। इस शुभ अवसर पर विद्यालय की ईको क्लब द्वारा पर्यावरण संरक्षण का संदेश देते हुए पौधा रोपण किया गया। तत्पश्चात विद्यालय के चारों सदनों के मध्य एक भाषण प्रतियोगिता करवाई गई जिसका शीर्षक ''आधुनिक समाज में शिक्षक की भूमिका'' था। ''शिक्षक महत्व'' पर एक निबन्ध लेखन प्रतियोगिता भी करवाई गई जिसमें बच्चों ने बढ़ चढ़कर भाग लिया। सभी विद्यार्थियों ने अपने अध्यापकों को शिक्षक दिवस की बधाई देते हुए अपने हाथों से बनाए गए सुन्दर–सुन्दर ग्रीटिंग कार्ड भेंट गए। डी.ए.वी. प्रबन्ध कर्त्री नई दिल्ली के प्रधान माननीय पूनम सूरी जी, डी.ए.वी. विद्यालयों के प्राचार्यों व स्थानीय प्रबन्धक समिति के सदस्यों से भी सभी अध्यापकों को बधाई व शुभकामना संदेश प्राप्त हुए। इस अवसर पर अध्यापकों व सभी विद्यार्थियों ने प्रधानमंत्री श्रीमान नरेन्द्र मोदी जी के भाषण को बड़ी–ही तन्मयता के साथ सुना। प्राचार्य ने कहा कि शिक्षक वास्तव में आचार्य होता है, आचार्य का अर्थ है आचरण करने योग्य व्यक्तित्व अर्थात् जिसका आचरण किया जाए, वास्तव में वही आचार्य है। अतः हम शिक्षक वर्ग को अपने दायित्व का निर्वहन करने के लिए सदैव तत्पर रहना चाहिए।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – श्री पूनम सूरी

thearyasamaj.org

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार 05 अक्तूबर, 2014 से 11 अक्तूबर, 2014

निर्भय बनूँ

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

**यदन्ति यच्च दूरके, भयं विन्दति मामिह।
पवमान वि तज्जहि।।**

ऋग् ९.६४.२१

**ऋषिः मैत्रावरुणिः वसिष्ठः। देवता पवमानः सोमः।
छन्दः गायत्री।**

●(यत्) जो, (अन्ति) समीप, (यत् च) और जो, (दूरके) दूर, (इह) यहाँ, (मां) मुझे, (भय) भय, (विन्दति) प्राप्त करता है, (पवमान) हे सर्वत्र–संचारी, पवित्रकर्ता सोम प्रभु!, (तत्) उसे, (वि जहि) विनष्ट करो।

● मनुष्य प्राणियों में सबसे अधिक बुद्धिमान् होता हुआ भी सबसे अधिक भयशील है। अन्य सब पशु, पक्षी, सरीसृप, कीट, पतंग आदि जन्तु भयावह जंगलों में भी निर्भय विचरते हैं। पर मानव घर में भी भयभीत रहता है, दंश, मशक, वृश्चिक, सर्प, आधि, व्याधि, चोर, शत्रु, शासक आदि के भय से व्याकुल रहता है। ये भय आत्म–विश्वास और प्रभु–विश्वास की कमी के कारण होते हैं।

मैं भी समीप के और दूर के अनेक प्रकार के भयों से घिरा हुआ हूँ। समीप में मुझे अपने पड़ोसियों से, साथी–संगियों से, यहाँ तक कि घर के सदस्यों से भी भय लगा रहता है कि ये कहीं मेरा कुछ अनिष्ट न कर दें। अपने मन में सन्देह का बीज बोकर मैं सोचता हूँ कि कहीं ये मेरी हत्या न कर दें, मेरा धन न हड़प लें, मेरा रथ न हर लें। नींद में भी मुझे चोरों के सपने आते है। दूर जाता हूँ। दूर जाता हूँ तो वहाँ भी भय पीछा नहीं छोड़ता। सोचता हूँ कहीं रेलगाड़ी न टकरा जाए, कहीं मोटरकार आदि यान दुर्घटना–ग्रस्त न हो जाए, कहीं लुटेरे मुझे लूट न लें, कहीं मेरे दूर यात्रा पर आये होने के कारण मेरी अनुपम स्थिति में परिवार पर कोई संकट न आ जाए। ये सब तो ऐसे भय हैं, जो व्यर्थ ही मेरे शंकाशील मन को उद्विग्न किए रखते हैं; पर इनके अतिरिक्त कई भय सचमुच के भी होते हैं, जिनके भय का कारण वास्तव में उपस्थित होता है। उस समय भी मैं भय–कारणों का प्रतीकार करने के स्थान पर भयग्रस्त हुआ निष्कर्मा खड़ा रहता हूँ। मैं इतना भयशील हूँ कि मुझे सन्ध्या–वन्दन आदि सत्कर्म करते हुए भी भय व्यापे रहता है कि कहीं कोई मेरा उपहास न करे।

इन दूर के तथा समीप के सभी भयों को हे मेरे प्रभु! तुम्हीं दूर कर सकते हो। तुम्हारा सच्चा ध्यान मेरे अन्दर आत्म–संबल उत्पन्न कर सकता है। तुम 'पवमान' हो, सर्वत्र–संचारी, सर्वव्यापी और अन्तःकरण को पवित्र करनेवाले हो। तुम सर्वत्र मेरे चित्त की भय–दशा को जानकर और उससे मुझे मुक्त कर पवित्र करते रहो। हे पवित्रता के देव! तुम मेरे भयों को समूल विनष्ट कर दो, जिससे फिर कभी भय मेरे मानस को आक्रान्त न कर सके। समीप और दूर के सब स्थानों को, सब दिशाओं को, मेरे लिए निर्भय कर दो।

❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी है और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

दो रास्ते

● महात्मा आनन्द स्वामी

बात चल रही थी पैदा होते ही बालक को शिक्षा देने की। नवजात शिशु को आशीर्वाद दिया गया कि पत्थर बनो, कुल्हाड़ा बनो और सोने की तरह चमको। स्वामी जी ने कहा कि यह दुनियाँ उनके लिये है जो चमकते हैं, आगे बढ़ते हैं, उन्नति करते हैं।

इस प्रकार के विचार दिये जाने पर देवव्रत भीष्म बन जाते है जो मृत्यु पर भी विजय पाकर उसे आज्ञा देते हैं–"जब मैं चाहूँ तब आओ"।

भगवान विष्णु के हाथ में–'पद्म' है। इसका अर्थ है धन कमाओ लेकिन उसमे डूब न जाओ। आज धन कमाना ही जीवन का लक्ष्य बन गया है। यह भगवान् विष्णु की तरह काम करने का ढंग नहीं।

शख, चक्र, गदा और पद्म तो बाहरी चिन्ह हैं। विष्णु के उस परम पद को तो वह पाता है जिसने विज्ञान को अपना सारथि बना लिया हो और जिसका मन सोच समझ वाला, बुद्धि वाला, ज्ञान वाला हो। लेकिनप्राप्त करता कहाँ है? ध्यानावस्था में जाकर।

आज के विज्ञान को शैशवावस्था वाला बताते हुए स्वामी जी ने रामायण, महाभारत काल में विज्ञान किस उन्नत अवस्था में था इसका जिक्र किया। उन्होंने कहा विज्ञान किसी भी समय का हो वह लाभकारी तभी होगा जब मन के काबू में रहे। बेलगाम होकर बढ़ेगा तो विनाश होगा जैसा महाभारत में हुआ।

स्वामी जी ने विज्ञान को "सम्यक् ज्ञान" कहा और वह है आत्मा का ज्ञान, विष्णु का ज्ञान, यह ज्ञान कि मै कौन हूँ ? मेरा लक्ष्य क्या है ? **"प्रग्रहवान् नरः"** कहकर बताया है इन्द्रियों का वश में रखने वाला 'नर' होता है।

अब आगे

आप्नीति तद् विष्णोः परं पदम्

'ऐसा मनुष्य विष्णु के परम पद को प्राप्त कर लेता है।' यह है 'सामवेद' के इस मन्त्र में आये 'विष्णु' शब्द का अर्थ।

इससे आगे दो शब्द हैं– 'सूर्य' और 'ब्रह्म'।

अब सूर्य के अनुसार अथवा सूर्य के पीछे चलने का अर्थ क्या हुआ? सूर्य तो यहाँ से 9 करोड़ 35 लाख मील की दूरी पर है। इसके पीछे कैसे चलें? नहीं भाई, सूर्य के पीछे चलने का अर्थ उसके पास पहुँचकर उसके साथ–साथ दौड़ना नहीं। उसके पीछे चलने का अर्थ है उसके गुणों को, उसकी विशेषताओं को अपने अन्दर धारण करना। ये विशेषताएँ क्या हैं?

सबसे पहली विशेषता यह कि सूर्य कभी अपने कर्त्तव्य से इधर–उधर नहीं होता। कभी छुट्टी नहीं माँगता, कभी बीमारी का बहाना बनाकर प्रार्थना–पत्र नहीं भेजता कि 'मैं बीमार हूँ, मैं काम पर नहीं आऊँगा।' लगभग दो अरब वर्ष हो गए सूर्य को अपने कर्त्तव्य पर डटे हुए। कभी एक दिन भी उसने छुट्टी नहीं की। खड़ा है अपनी जगह पर। भगवान् ने जो काम उसे सौंप दिया है, उसे किये जाता है। यदि यह सूर्य भी किसी 'लेबर यूनियन' का सदस्य होता और माँग करता कि 'मुझे वर्षभर में दो महीने की छुट्टी चाहिए' तो पता है आपको क्या होता? सूर्य दो मास की छुट्टी करता और इस सूर्यमण्डल का दूसरे दिन 'राम नाम सत्य' हो जाता। यह पृथिवी न रहती। यह बुध, शुक्र, मंगल, शनि, बृहस्पति, अरुण, वरुण और यम तारे न रहते। हर जगह हर प्रकार के जीवन कर अन्त हो जाता क्योंकि यह जीवन तो सूर्य से आता है।

सूर्य के पीछे चलना है तो अपने कर्त्तव्य के पालन में किसी भी समय एक क्षण के लिए भी प्रमाद न करो। यह बात मैंने अमेरिका में देखी और मैं समझता हूँ कि अमेरिका ने उन्नति की; समृद्धि और धन–धान्य प्राप्त किया तो अमेरिका के लोगों की इस विशेषता के कारण। अमेरिका के आम लोग शराब पीते हैं और खूब पीते हैं, सिगरेट पीते हैं और बहुत पीते हैं, दूसरी वस्तुएँ भी खाते–पीते हैं, परन्तु कार्य के समय कोई सिगरेट नहीं, सिगार नहीं, शराब नहीं, कुछ नहीं। इस प्रकार काम करते हैं जैसे काम करना ही धर्म हो। कर्त्तव्य के सम्बन्ध में वे कभी प्रमाद नहीं करते। यदि कार्यालय में बैठे हैं तो चाय पीने, गप्पें लड़ाने या कुर्सी पर बैठे–बैठे ऊँघने का काम नहीं करते; केवल अपने कर्त्तव्य को पूरा करते हैं और पूरी लगन से करते हैं। हमारे यहाँ के सरकारी कार्यालयों की तरह वहाँ अमेरिका के लोग कार्यालय में जाते हैं तो 'Meeting, Eating and Cheating' के

thearyasamaj.org

लिए नहीं, बल्कि काम करने के लिए। काम यदि समाप्त नहीं हुआ, कार्यालय का समय भले ही समाप्त हो गया हो, तो वे अपने अधिकारी के पास बैठे काम करते रहते हैं।

तो यह विशेषता है, मेरे भाई, जो सूर्य से सीखनी चाहिए। कुछ भी हो जाय अपने कर्त्तव्य को पूरा करो, अपने कर्त्तव्य से हटो नहीं, भागो नहीं।

सूर्य का दूसरा गुण है–चमक। हर समय, हर क्षण वह चमकता हुआ दिखाई देता है। तुम यदि सूर्य के पीछे चलना चाहते हो तो तुम भी चमको। परन्तु कैसे चमको? मुँह पर तेल मलके, चेहरे पर सुर्खी और पाउडर लगाकर? नहीं मेरे भाई! मेरी बच्ची! यह चमक कोई चमक नहीं। चमक को अपने अन्दर से पैदा करो ! कश्मीरी सेब देखते हैं न आप, अम्बरी सेब, उनके ऊपर सुर्खी देखी है आपने ? चमकती हुई सुर्खी? यह सुर्खी क्या करोल बाग का कोई पेंटर एक–एक सेब के ऊपर लगाता है? नहीं, यह सुर्खी सेब के अन्दर से निकलकर बाहर आती है। उसके कारण सेब सुन्दर प्रतीत होने लगता है। हर देखने वाले को अच्छा लगता है। तुम भी इसी तरह चमको। तुम्हारे चेहरे पर इसी तरह सुर्खी हो, रौनक हो। यह रौनक पैदा होती है ब्रह्मचर्य से; बाहर की लोपापोती से नहीं। जिसने ब्रह्मचर्य को नष्ट कर दिया, फ़ैमली प्लैनिंग वालों की गोलियों की भेंट कर दिया, उसके चेहरे पर रौनक आएगी कैसे?

सूर्य का तीसरा गुण है–आकर्षण। सबको अपनी ओर खींचे रखना। तुम भी इस गुण को धारण करो, मेरे भाई ! तुम्हारे बेटे, बेटियाँ, भाई, बहन, माता, पिता, सम्बन्धी, मित्र और सभी लोग जो तुम्हारे निकट हैं तुम्हारे अन्दर आकर्षण–शक्ति अनुभव करें, तुम्हारे पास आना चाहें, तुम्हारे पास रहना चाहें–ऐसा स्वभाव बनाओ अपना। सूर्य में यदि यह आकर्षण–शक्ति न हो, यदि थोड़ी देर के लिए भी यह समाप्त हो जाय तो यह सारा सूर्य–मण्डल नष्ट–भ्रष्ट हो जाएगा। इसके कारण सूर्य के गिर्द घूमनेवाले तारे अपनी–अपनी जगह पर दौड़ते हैं। वह उन्हें खींच कर रखता है। इधर–उधर जाने नहीं देता। वह ऐसा न करे तो मंगल से पृथिवी जा टकराएगी, बुध शुक्र से जा टकराएगा। सब–के–सब सूर्य मण्डल से इस प्रकार बाहर निकल भागेंगे, जैसे स्कूल के बच्चे छुट्टी के समय स्कूल से भागते हैं और भागकर घर पहुँच जाते हैं। ये तारे टुकड़े–टुकड़े होकर चकनाचूर हो जाएँगे।

तब सूर्य का चौथा गुण है यह कि वह अपनी कीली (धुरी) से कभी इधर–उधर नहीं होता। दो अरब वर्ष पहले जहाँ खड़ा था, वहीं अब भी विद्यमान है। वहीं अपने केन्द्र पर घूमता है। यदि वह कहे कि एक ही जगह, एक ही केन्द्र पर घूमता हुआ तो मैं बोर हो गया, थोड़ी देर के लिए पचास–साठ हज़ार मील पृथिवी की ओर बढ़ जाता हूँ, तो इस धरती पर सबका भुर्ता बन जाएगा। यह बात सूर्य से सीखो, मेरे भाई! तुम मानव हो, मानवता तुम्हारा केन्द्र है। इस केन्द्र को छोड़ो नहीं। हमारे देश में जो गिरावट आई, उसका सबसे बड़ा कारण यह है कि हम अपने केन्द्र पर दृढ़ नहीं रहे। चार वर्ण थे हमारे देश में–ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। ये वर्ण इसलिए बनाये गए कि समाज के अन्दर काम का विभाजन हो। जो पढ़ने, लिखने, सोचने, विचारने, दूसरों को पढ़ाने–लिखाने, और धर्म क्या है, पाप क्या है, यह बताने का काम करें, वे ब्राह्मण। जो देश की रक्षा का, समाज में क़ानून और व्यवस्था को बनाये रखने का, राज को चलाने का काम करें, वे क्षत्रिय। जो व्यापार का, खेती–बड़ी का, कला आदि चलाने का और उनके प्रबन्ध करने का काम करें, वे वैश्य। जो पढ़े–लिखे नहीं हैं, जो दूसरों की सेवा करके जीविका चलाते हैं, वे शूद्र। ये चारों वर्ण हमारे पूर्वजों ने स्थापित किये कि समाज में Division of Labour (श्रम–विभाजन) हो। इन वर्णों का सम्बन्ध मनुष्य की योग्यता से था, जन्म से नहीं। ब्राह्मण अयोग्य हो, अनपढ़ हो तो शूद्र बन जाता था; शूद्र योग्य हो, पढ़ा–लिखा हो, उसमें ब्राह्मणों के गुण हों तो वह ब्राह्मण बन जाता था। यह था हमारा केन्द्र। इस पर हमें स्थिर रहना चाहिए था। हमने पहला अनर्थ किया यह कि वर्ण–व्यवस्था का आधार योग्यता और काम को नहीं, अपितु जन्म को मान लिया। जो ब्राह्मण के घर में पैदा हुआ, वह ब्राह्मण है, चाहे उसके लिए काला अक्षर भैंस बराबर हो, चाहे वह बर्तन माँजने और खाना बनाने के सिवाय दूसरा काम न जानता हो। और जो शूद्र के घर में पैदा हुआ, वह शूद्र है चाहे वह कितना पढ़ा–लिखा क्यों न हो, कितना ही ज्ञानी और पण्डित क्यों न हो।

फिर हमने ब्राह्मणों में कई जातियाँ पैदा कर दी। ऐसे ही क्षत्रियों, वैश्यों, शूद्रों में भी। ब्राह्मणों में वेदी, द्विवेदी, त्रिवेदी, चतुर्वेदी, सामवेदी, यजुर्वेदी आदि हुए। तब इनमें कोई सारस्वत, कोई कश्मीरी, कोई गौड़ आदि हुए। तब इनमें से कई और जातियाँ जाग उठीं।

एक था पठान। उसके पड़ोसवाले मुहल्ले में एक सेठ जी बहुत बड़ा ब्रह्म–भोज कर रहे थे। बहुत–से ब्राह्मणों को उन्होंने न्योता दे रखा था, उनके लिए तरह–तरह के खाने बन रहे थे। पठान की नाक में उनकी सुगन्धि पहुँची तो उसने अपने एक साथी को कहा–"मैं भी इस दावत में शामिल होकर खाना खाने जाता हूँ।"

साथी बोला–"जाते तो हो, परन्तु इस प्रकार जाओगे तो कोई वहाँ घुसने नहीं देगा। ये कपड़े उतारकर, कुर्ता और धोती पहनो, यज्ञोपवीत भी पहनो, माथे पर तिलक लगा लो, फिर वहाँ जाओ।"

पठान ने कहा–" ऐसे ही करता हूँ।

साथी ने कहा–" परन्तु केवल इतना करना ही काफ़ी नहीं होगा, वहाँ कोई पूछे कि तुम कौन हो? तो कहना–ब्राह्मण हूँ। और कोई पूछे–कौन ब्राह्मण हो? तो कहना–गौड़ ब्राह्मण हूँ।"

पठान ने पाठ याद कर लिया, कपड़े बदले, ब्रह्म–भोज में पहुँचा, एक पंक्ति में बैठ गया। उसके पास बैठे को कुछ सन्देह हुआ। उसने पूछा–"तुम कौन हो?" पठान ने कहा–"ब्राह्मण हूँ।" पूछनेवाला बोला–"कौन ब्राह्मण?" पठान ने कहा–गौड़। पूछनेवाला बोला– "कौन गौड़? पठान ने घबराकर कहा– "या अल्लाह! गौड़ में भी और होते हैं?"

यह हाल कर दिया हमने! वर्णों में जातियाँ, इन जातियों में और जातियाँ, फिर और, फिर और, कोई अन्त नहीं कहीं पर।

और बहुत बड़े ब्राह्मण हैं हमारे देश में, बहुत विद्वान, बहुत सज्जन, बहुत सज्जन, बहुत आदर के योग्य। एक थे पं. मदन मोहन जी मालवीय, दूसरे पण्डित दीनदयाल जी वाचस्पति। परन्तु मालवीय जी खाना बनाएँ तो दीनदयाल जी उसे खा न सकें, दीनदयाल जी बनाएँ तो मालवीय जी न खा सकें, क्योंकि दोनों की जातियाँ अलग–अलग हैं। आखिर यह क्या बात हुई? यह तो आर्यपन नहीं, मानवता ही नहीं। अपने केन्द्र को छोड़ दिया हमने, मानवता के केन्द्र को छोड़ दिया।

अपनी एक बात सुनाता हूँ आपको–यह उस समय की बात है जब मैं आनन्द स्वामी नहीं, खुशहाल चन्द था।

रतलाम से महात्मा हंसराज जी के पास सूचना आई कि कुछ ईसाई वहाँ भीलों पर अत्याचार कर रहे हैं। महात्मा जी ने मुझे कहा कि– "तुम वहाँ जाओ, सारे हालात मालूम करके आओ।"

मैं लाहौर से चला। सर्दी का मौसम था। दो दिन दो रात गाड़ी चलती रही। रास्ते में खाने को ठीक से मिला नहीं। रतलाम पहुँचा तो भूख लग रही थी। अपने एक मित्र के यहाँ जाकर ठहरा, नहाया–धोया, कपड़े बदले, प्रतीक्षा करने लगा कि अभी मित्र जी कुछ खाने को कहेंगे, परन्तु अपने कमरे में बैठे पूजा करते रहे। दस बज गए, ग्यारह बज गए, मेरे पेट में भूख से चूहे दौड़ते हुए मालूम होने लगे। एक बार सोचा कि बाज़ार जाके कुछ खा आता हूँ, परन्तु फिर विचार आया कि मित्र को पता लगा तो वह बुरा मनायेंगे। मन मार के बैठा रहा। अन्त में बारह बजे मित्र जी मेरे पास आये; बोले–"चलो, खाना खाओ।" मैं जल्दी से उनके साथ गया। रसोईघर के बाहर बरामदा था। बरामदे में पहुँचकर मित्र ने कहा–"कपड़े उतारो!"

मैंने चकित होकर पूछा– "कपड़े किसलिए उतारूँ?"

वह बोले– "खाना खाओगे कि नहीं?"

मैंने कहा– "अरे भाई, होटल में खाना खाओ, तो होटलवाले खाने के बाद पैसे माँगते हैं, पैसे न हों तो कपड़े उतरवा लेते हैं। तुम पहले ही उतरवाना चाहते हो?"

वह बोले– "बातें नहीं करो, कपड़े उतारो, खाना ठण्डा हुआ जाता है।"

लो जी! मैंने कोट उतार दिया, कमीज भी उतार दी। खद्दर की एक बनियान नहीं उतारी।

वह बोले– "यह बनियान भी उतारो!"

मैंने कहा– "क्या करते हो, सर्दी का मौसम है, मुझे ठण्ड लग जायेगी।"

वह बोले– "लगने दो, खाना खाना है कि नहीं?"

मैंने बनियान उतार दी तो वह बोले–"यह धोती भी उतार दो।"

सामने कील पर एक मलमल की एक धोती लटक रही थी। उसकी ओर इशारा करके बोले– "वह धोती पहन लो!"

मैंने यह भी किया। रसोई में दाखिल हुए तो वहाँ वर्गाकार चौके बने हुए थे। उनके बैठने के लिए अलग, मेरे बैठने के लिए अलग।

वह बोले– "इस चौके में बैठो!"

मैं आगे बढ़ा, चौके में पाँव रखा ही था कि वह चिल्ला उठे– "बेड़ा ग़रक़ हो गया।"

मैंने आश्चर्य से कहा– "यह खुश्की में बेड़ा कैसे ग़रक हो गया?"

वह दुःखभरी आवाज़ में बोले–"नौकर ने प्रातः से मेहनत करके खाना बनाया था। वह सब खराब हो गया।"

मैंने पूछा– "किसने खराब कर दिया?"

वह बोले– तुमने।"

मैंने पूछा– "कैसे कर दिया खराब? मैंने तो अभी खाने को हाथ भी नहीं लगाया।"

वह बोले– "अरे भाई! तुम ग़लत तरीके से चौके में प्रविष्ट हुए। तुमने एक पाँव रखा चौके से बाहर, दूसरा उसके अन्दर। इससे सब सत्यानाश हो गया है।"

मैंने पूछा– "चौके में इस तरह नहीं तो और कैसे जाता?"

वह बोले– "एकदम दोनों पाँव उठाकर कूदकर जाना था।"

(सब लोग ज़ोर से हँस उठे। स्वामी जी भी देर तक हँसते रहे। हँसते हुए बोले–)

यह तो हालत कर दी हमने! परन्तु यह हालत हुई इसलिए कि हमने अपने केन्द्र को छोड़ दिया।

शेष पृष्ठ 6 पर ☞

thearyasamaj.org

योग के साधकों को आश्वासन

● प्रो. उमाकान्त उपाध्याय

महर्षि पतञ्जलि ने अपने योगदर्शन में योग के आठ अंग बताये हैं– (1) यम (2) नियम (3) आसन (4) प्रायाणाम (5) प्रत्याहार (6) धारणा (7) ध्यान और (8) समाधि। इनमें प्रथम के चार–यम, नियम, आसन और प्राणायाम–बहिरंग योग कहलाते हैं। अन्त के चार–प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि–अन्तरंग योग हैं।

यम पाँच प्रकार के होते हैं–

"तत्राहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहा यमाः।।

अर्थात् (**अहिंसा**) वैरत्याग, (**सत्य**) सत्य ही मानना, सत्य ही बोलना और सत्य ही करना, (**अस्तेय**) अर्थात् मन, कर्म, वचन से चोरी त्याग, (**ब्रह्मचर्य**) अर्थात् उपस्थेन्द्रिय का संयम, (**अपरिग्रह**) अत्यन्त लोलुपता, स्वत्वाभिमानरहित होना, इन पाँच यमों का सेवन सदा करें।

नियम –

"शौच सन्तोष तपः स्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः।।"

–यह योगदर्शन का वचन है।

(**शौच**) अर्थात् स्नानादि से पवित्रता, (**सन्तोष**) सम्यक् प्रसन्न होकर निरुद्यम रहना सन्तोष नहीं, किन्तु पुरुषार्थ जितना हो सके उतना करना, हानि–लाभ में हर्ष वा शोक न करना, (**तपः**) अर्थात् कष्टसेवन से भी धर्मयुक्त कर्मों का अनुष्ठान, (**स्वाध्याय**) पढ़ना–पढ़ाना, (**ईश्वरप्रणिधान**) ईश्वर की भक्ति विशेष से आत्मा को अर्पित रखना, ये पाँच नियम कहते हैं।

योगदर्शन का वचन यह भी है।

"यमान् सेवेत सततं न नियमान् केवलान् बुधः।
यमान्पतत्यकुर्वाणो नियमान् केवलान् भजन्।।" –मनु. 4/204

यम और नियम जीवन जीने के महत्वपूर्ण अंग है, इनके अभाव में योग की साधना असम्भव है। यहाँ एक और सच्चाई ध्यान में रखनी चाहिये कि सदाचारी मनुष्य गृहस्थ भी योग की साधना आराम से कर सकता है।

योग की तीसरा अंग है आसन। योगदर्शन का सूत्र है–

"स्थिरसुखमासनम्" योगसाधना के लिये लम्बे समय तक स्थिर होकर सुखपूर्वक बैठना। योगसाधना के लिए मुख्य रूप से सिद्धासन, पद्मासन व सुखासन बताये जाते हैं। आसन के सम्बन्ध में मुख्य बात यह है कि दोनों पुट्ठे समान रूप से आसन पर स्थित हों, कमर में जहाँ त्रिकास्थि है वहाँ से मेरुदण्ड गर्दन तक सीधा रहे। इससे इडा, पिङ्गला और सुषुम्णा तीनों नाड़ियाँ खुली रहें और प्राणों का आवागमन होता रहे। साधना के लिये इतना ही आसन पर्याप्त है।

योग का चतुर्थ अंग है प्राणायाम। प्राणायाम में प्राणों को श्वास से दोनों नथुनों से बाहर निकालकर रोकना वायु और मूल को संकुचित करना लाभकारी है। अधिक देर बाह्यवृति अर्थात् बाहर रोकना उत्तम है। स्वाभाविक रूप से श्वास अन्दर लेकर थोड़ा रोककर फिर बाहर रोकना मूल पायु का संकोच करना लाभकारी है। इससे इडा, पिङ्गला और सुषुम्णा तीनों खुलकर सक्रिय हो जाती हैं और साधना में सहयोग मिलता है।

इसके पश्चात् ध्यान का क्रम आता है। योगदर्शन में आता है – "तत्रैयिकतानता ध्यानम्। धारणा को एकरस बनाये रखना, कोई विच्छेद न होने ध्यान है। ध्यान में परमेश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव का निरन्तर चिन्तन करते रहना उचित है। इसका पूर्ण अभ्यास हो जाने पर समाधि लग जाती है। समाधि में सब कुछ भूल जाता है। ध्यान करने वाला अपने को भूल जाता है, मैं ध्यान कर रहा हूँ यह भी भूल जाता है। केवल परमेश्वर का चिन्तन मात्र ही ध्यान में रह जाता है। समाधि भी सम्प्रज्ञात और असम्प्रज्ञात दो तरह की होती है। इस समय समाधि के इन दोनों भेदों को अब छोड़ रहे हैं, यह साधना का ऊँचा विषय है। योग साधना में समाधि तक पहुँचना अनेक जन्मों में सिद्ध हो पाता है।

यम, नियम, आसन और प्राणायाम, ये चारों बहिरंग हैं। प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि ये चारों अन्तरंग योग हैं। प्रत्याहार का अर्थ है कि ज्ञान इन्द्रियों को बाह्य विषयों से अन्तर्मुखी करके परमेश्वर में ध्यान लगाना। भगवान ने आँख, कान, नाक आदि ज्ञान इन्द्रियों को बहिर्मुखी बनाया है, इसलिये वे बाहर के विषयों को आसानी से ग्रहण कर लेती हैं। उन्हें अन्तर्मुखी करके परमेश्वर के गुण, चिन्तन में लगाना प्रत्याहार है, इसीलिये योगसाधना के समय आँखें अधखुली बन्द कर लेते हैं। कई लोग कानों में रूई का फूहा भी लगा लेते हैं। इससे बाहर के दृश्य, शब्द आदि नहीं सुनायी पड़ते। अन्तरंग योग का द्वितीय साधन "धारणा" है। धारणा का परिभाषा है– **"देशबन्धचितस्यधारणा।"** चित्त को किसी एक स्थान पर बांध देना। कई लोग दीपक की लौ पर भी धारणा करते हैं। किन्तु परमेश्वर की धारणा के लिये हृदय पुण्डरीक – दोनों छातियों के बीच जगह पर, नासिकाग्र दोनों भौहों के बीच में आज्ञा चक्र पर (जहाँ पिट्यूटरी ग्लैण्ड्स) और सिर में सहस्रार (जहाँ खोपड़ी में पिलपिला है) उत्तम स्थान हैं।

इसके पश्चात् ध्यान का क्रम आता है। योगदर्शन में आता है – **"तत्रैयिकतानता ध्यानम्।** धारणा को एकरस बनाये रखना, कोई विच्छेद न होने ध्यान है। ध्यान में परमेश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव का निरन्तर चिन्तन करते रहना उचित है। इसका पूर्ण अभ्यास हो जाने पर समाधि लग जाती है। समाधि में सब कुछ भूल जाता है। ध्यान करने वाला अपने को भूल जाता है, मैं ध्यान कर रहा हूँ यह भी भूल जाता है। केवल परमेश्वर का चिन्तन मात्र ही ध्यान में रह जाता है। समाधि भी सम्प्रज्ञात और असम्प्रज्ञात दो तरह की होती है। इस समय समाधि के इन दोनों भेदों को अब छोड़ रहे हैं, यह साधना का ऊँचा विषय है। योग साधना में समाधि तक पहुँचना अनेक जन्मों में सिद्ध हो पाता है।

अर्जुन ने गीता में श्रीकृष्ण से पूछा है यदि कोई मनुष्य योग साधना करता–करता भटक जाये तो उसकी क्या गति होती है–

"अयतिः श्रद्धयोपेता योगाच्चलितमानसः।
अप्राप्य योगसंसिद्धिं कां गतिं कृष्ण गच्छति।।" गीता. 6/36

अर्जुन बोले– हे कृष्ण! जो योग में श्रद्धा रखने वाला है; किन्तु संयमी नहीं है, इसका कारण जिसका मन अन्तकाल में योग से विचलित हो गया है, ऐसा साधक योग की सिद्धि को अर्थात् भगवत्साक्षात्कार को न प्राप्त होकर किस गति को प्राप्त होता है।

श्रीकृष्ण जी उत्तर देते हैं कि योग का मार्ग कल्याण का मार्ग है। योग के मार्ग में चलने वाले की कभी दुर्गति नहीं होती। गीता में श्रीकृष्ण के आश्वासन ध्यान देने योग्य हैं–

"पार्थ नैवेह नामुत्र विनाशस्तस्य विद्यते।
न हि कल्याणकृत्कश्चिद् दुर्गतिं तात गच्छति।।" गीता 6/40

श्रीभगवान् बोले– हे पार्थ। उस पुरुष का न तो इस लोक में नाश होता है और न परलोक में ही। क्योंकि हे प्यारे! आत्मोद्धार के लिये अर्थात् भगवत्प्राप्ति के लिये कर्म करने वाला कोई भी मनुष्य दुर्गति को प्राप्त नहीं होता।

"प्राप्य पुण्यकृतां लोकानुषित्वा शाश्वतीः समाः।
शुचीनां श्रीमतां गेहे योग भ्रष्टोऽभिजायते।।"
गीता. 6/41

योगभ्रष्ट पुरुष पुण्यवानों के लोकों को अर्थात् स्वर्गादि उत्तम लोकों को प्राप्त होकर, उनमें बहुत वर्षों तक निवास करके फिर शुद्ध आचरण वाले श्रीमान् पुरुषों के घर में जन्म लेता है।

अथवा वैराग्यवान पुरुष उन लोकों में न जाकर ज्ञानवान् योगियों के ही कुल में जन्म लेता है। परन्तु इस प्रकार का जो यह जन्म है, सो संसार में निःसन्देह अत्यन्त दुर्लभ है।

"तत्र तं बुद्धिसंयोगं लभते पौर्वदेहिकम्।
यतते च ततो भूयः संसिद्धौ कुरुनन्दन।।"
गीता. 6/43

वहाँ उस पहले शरीर में संग्रह किये हुए बुद्धि–संयोग को अर्थात् समबुद्धिरूप योग के संस्कारों को अनायास ही प्राप्त हो जाता है और हे कुरुनन्दन! उसके प्रभाव से वह फिर आत्मा की प्रतिरूप सिद्धि से पहले से भी बढ़कर प्रयत्न करता है।

"पूर्वाभ्यासेन तेनैव ह्रियते ह्यवशोऽपि सः।
जिज्ञासुरपि योगस्य शब्दब्रह्मातिवर्तते।।"
गीता. 6/44

वह श्रीमानों के घर में जन्म लेनेवाला योगभ्रष्ट पराधीन हुआ भी उस पहले के अभ्यास से ही निःसन्देह भगवान् की ओर आकर्षित किया जाता है, तथा समबुद्धिरूप योग का जिज्ञासु भी वेद में कहे हुए सकाम कर्मों के फल को उल्लंघन कर जाता है।

प्रयत्नाद्यतमानस्तु योगी संशुद्धकिल्विषः।
अनेक जन्मसंसिद्धस्ततो याति परां गतिम्।।" गीता. 6/45

परन्तु प्रयत्नपूर्वक अभ्यास करनेवाला योगी तो पिछले अनेक जन्मों के संस्कार बल से इसी जन्म में संसिद्ध होकर सम्पूर्ण पापों से रहित हो फिर तत्काल ही परमगति को प्राप्त हो जाता है।

इस सबका यही आशय है कि मनुष्य को जहाँ तक सुयोग सुविधा मिले, शरीर साथ दे, परमेश्वर के साक्षात्कार के लिये योगसाधना अवश्य करते रहना चाहिए।

"ईशावास्यम्"
पी–30, कालिन्दी हाऊसिंग स्टेट
कोलकाता–700089
मो. : 9432301602

thearyasamaj.org

उत्कृष्ट शङ्का समाधान

● स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक

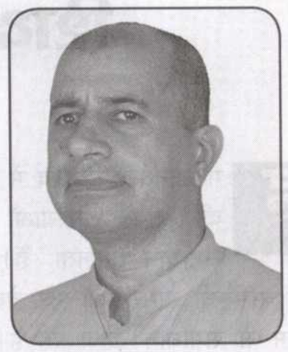

शंका– क्या व्यक्ति को बुरे कर्म करने के पश्चात अन्य सभी योनियों को भोगना पड़ेगा अथवा कुछ योनियों के पश्चात् वापस मानव जन्म मिलेगा?

समाधान– उत्तर है:–

● एक व्यक्ति ने 20 हजार रुपए की चोरी की, दूसरे व्यक्ति ने दो अरब रुपये की चोरी की। वस्तुतः चोरी दोनों ने की, इसलिए दोनों अपराधी हैं। निःसन्देह दोनों को दण्ड मिलेगा।

● क्या दण्ड की मात्रा दोनों की समान रहेगी, या कम–अधिक? दण्ड की मात्रा कम–अधिक होगी। यदि दोनों को बराबर दण्ड दिया जाए, तो यह न्याय थोड़े ही होगा, यह तो अन्याय होगा।

एक ने अपराध थोड़ा किया, तो उसको थोड़ा दण्ड। एक ने अपेक्षाकृत अधिक अपराध किया। तो उसको अधिक दण्ड, यह न्याय है।

किसी ने 20 हजार पाप किए तो किसी ने 50 हजार। उन दोनों का ही 84 लाख योनियों में डाल दें, तो फिर यह न्याय कहाँ होगा? जिसने जितना अपराध किया, उतना ही योनियों में जाएगा, दण्ड भोगेगा, धक्का खाएगा और लौटकर वापस मनुष्य बनेगा।

● **जिसने थोड़ा अपराध किया, वह थोड़ी योनियों में धक्का खाएगा। जिसने ज्यादा अपराध किए, वो ज्यादा योनियों में जाएगा।**

● बताते हैं कि चौरासी लाख योनियाँ हैं, पता नहीं कहाँ–कहाँ नम्बर लगेगा। कई लोग समझते हैं कि एक बार मनुष्य मर गया तो पूरे चौरासी लाख का चक्कर काटकर फिर नंबर आएगा इंसान रूप में। यह गलत है। क्यों गलत है? इसे जानते हैं:–

क्या सब लोग बराबर मात्रा में पाप करते हैं? नहीं न। तो सब को बराबर दंड क्यों मिलेगा? जब पाप कम–अधिक करते हैं, तो फल भी कम–अधिक होना चाहिए। अगर एक मरा वो भी चौरासी लाख योनियों में डाल दिया, दूसरा मरा, वो भी चौरासी लाख योनियों में, तो यह न्याय नहीं है। जिसने जितने कर्म किए हैं, उसको उतना दंड मिलेगा। जिसने बीस प्रतिशत पाप अधिक किए, उसको उतने कर्मों का दंड भोगने के लिए दस–बीस, पच्चीस–पचास योनियों में चक्कर काटना पड़ेगा। इसलिए सब को 84 लाख योनियों में नहीं जाना। वो कितनी योनियों में चक्कर काटेगा, वो भगवान जाने, हम नहीं जानते।

शंका– क्या योनियों की संख्या 84 लाख है?

समाधान– इसका कोई शास्त्रीय प्रमाण तो मेरी जानकारी में नहीं है। मैंने सब शास्त्र नहीं पढ़े। कहीं शास्त्रों में लिखा हो भी सकता है। परम्परा से तो यही सुनते आ रहे हैं। लेकिन पक्का नहीं कह सकते है कि– 84 लाख हैं, या 80 लाख हैं। जितनी भी हों, फिर भी 'लाखों योनियाँ हैं' ऐसा मानने में तो कोई दोष प्रतीत नहीं होता।

दर्शन्योग महाविद्यालय
रोजड़वन, गुजरात

वक्त के साये तले, देश–विकास और स्वतंत्रता का कीर्ति–स्तम्भ

● एस.पी.सहदेव

व्यक्ति, परिवार, समाज व राष्ट्र की जीवन लीला में कभी–कभी ऐसे पड़ाव भी आते हैं जिनके तल विकास और संघर्ष के रास्ते आसान मिल जाते हैं। इनमें से जो सही रास्ते का अनुगामी बन जाता है वह लगन और परिश्रम के बल पर संघर्ष और विकास की मंजिल को आसानी से प्राप्त होता है। तभी तो अपने लम्बे समय का इतिहास कीर्ति–स्तम्भ के रूप में कायम कर लेता है। संसार के इतिहास के कई पन्ने बनते हैं, जिन्हें आने वाली पीढ़ियां सदा स्मरण रखती हैं। उसीके आधार पर आने वाला इतिहास रचा जाता है और उन्हीं से शिक्षा ग्रहण कर अपने परिवार, समाज व राष्ट्र का परचम लहराया जा सकता है।

असंख्यों बलिदानों के पश्चात् हमने अपनी स्वतंत्रता को 15 अगस्त 1947 को प्राप्त किया। इतिहास साक्षी है कि भारत की स्वाधीनता का नाद सन् 1857 के विद्रोह के रूप में पनपा। राष्ट्र के महान योद्धा स्वर्गीय विनायक दमोदर सावरकर ने इसे 'भारत का प्रथम स्वाधीनता संग्राम' की संज्ञा से नवाजा। तत्पश्चात देश की स्वतंत्रता के लिए कई प्रकार के आंदोलन कई रूपों में अग्रसर हुए। एकता और अखंडता के लिए कई प्रकार के आंदोलन कई रूपों में अग्रसर हुए। देशवासियों ने आपदाओं और कठिनाइयों का सामना किया जो भुलाये भी नहीं भुलाया जा सकता। वक्त के साये तले राष्ट्र नायक महात्मा गांधी ने अपने जीवन के अंतिम श्वास, तक, भारत–भू की स्वाधीनता के लिए शांतमय संघर्ष का रास्ता अपनाया। कई प्रकार के जन–आंदोलनों द्वारा ऐसे कीर्ति–स्तम्भ कायम किये जिन्होंने शांतमय वातावरण की छाया तले अंग्रेजों के दांत खट्टे कर दिये और उस वक्त के शासकों को निर्णय लेना पड़ा कि भारत को स्वतंत्र कर दिया जाए।

पंजाब–जालंधर के एक छोटे से गांव तलवन में पैदा होने वाले बालक जिसका नाम मुंशीराम था जो बाद में स्वामी श्रद्धानन्द के नाम से विख्यात हुए राय–बरेली में सामाजिक क्रांति के सूत्रधार स्वामी दयानंद सरस्वती से मिलते हैं तो काफी प्रश्न और उत्तरों के वशीभूत हो, मुन्शी राम जो स्वामी जी के विचारों से सहमत हो, अपने जीवन को समाज व राष्ट्रहित समर्पित करने का फैसला लेते हैं जीवन पर्यन्त वचन का पालन करते हुए, अन्त में देश–हित सीने पर गोलियां खा शहादत को प्राप्त होते हैं। यह वही महान आत्मा थी जिसनें 43वें राष्ट्रीय अधिवेशन, जो अमृतसर में हुआ की अध्यक्षता को स्वीकार कर, व्यवस्था का सारा उत्तरदायित्व सम्भाला। जलियांवाला बाग में बैसाखी के अवसर पर अंग्रेजों द्वारा निर्दोष भारतीयों पर जुल्म ढाए गए, हज़ारों की गोलियों से भून दिया गया। इसी उपलक्ष्य में यह एक महान अधिवेशन बुलाया गया था ताकि जनता को स्वतंत्रता के लिए जागृत किया जाए। देश–स्वतंत्रता के लिए चांदनी चौक दिल्ली में एक जुलूस चल रहा था जिसका नेतृत्व पंजाब की महान आत्मा स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज कर रहे थे तब अंग्रेज सैनिकों ने अपनी बंदूके तान दीं कि जुलूस को आगे बढ़ने नहीं देना। तब भी यह महापुरुष संगीनों के सामने आगे बढ़े और सैनिकों के सामने खड़े होकर, छाती खोल कर ललकारने लगे कि हिम्मत है तो पहले मुझ पर गोली चलाओ। हालात भयानक होते देख, उस वक्त के शासकों को सोचने पर मजबूर कर दिया। एक महान योद्धा हज़ारों वीर योद्धाओं के साथ अंग्रेज़ों के साथ लोहा ले रहा था। वक्त की सरकार घबराते हुए सैनिकों को पीछे हटने का आदेश देती है धन्य हैं ऐसे वीर योद्धा। 23 दिसम्बर 1926 को अब्दुल रशीद नामक दिशा–हीन व्यक्ति ने उन पर गोलियां चलाकर, हमेशा के लिए अमर शहीद का जामा पहना दिया। पंजाब का वीर पुत्र हमसे हमेशा के लिये विदा हो गया। पंजाब सरकार ने कभी भी इस बहादुर योद्धा को राज्यस्तर पर याद नहीं किया, भले ही कुछ वर्ग उन्हें याद कर लेते हैं। शेर–ए–पंजाब लाला लाजपत राय भी देश स्वतंत्रता के सजग प्रहरी की तरह अपने जीवन का बलिदान कर गए। लाला जी अदम्य उत्साह के धनी, उच्च कोटि के विचारक, स्वतंत्रता के योद्धा व समाज सुधारक थे। पंजाब के जिला फरीदकोट के गाँव ढुढिके में 28 नवम्बर 1865 को उनका जन्म हुआ। यह भी पंजाबी महान योद्धा थे। आज़ादी के परवाने थे। एक योद्धा कर तरह वीरगति को प्राप्त हुए। उन्हीं की शहादत के बदले को मूर्तरूप देने व भारत जनमानस को जागृत करने हेतु सं. भगत सिंह, राजगुरु व सुखदेव और कई शूरवीरों ने माँ–भारती के चरणों में अपने शीश समर्पित कर दिये। वक्त के साये तले शहादत का जाम होंठों को लगा, स्वतंत्रता के कीर्ति–स्तम्भ को मजबूत किया। राष्ट्र धन्य है अपने बहादुर देश–भक्तों पर। तभी तो हम लोग स्वाधीनता का आनंद उठा रहे हैं।

देश के स्वतंत्रता सेनानियों व शहादत का पैगाम लेने व देने वालों की कृपा से राष्ट्र ने फिर से वक्त के साये को पैदा किया है, जिस साये–तले हम विकास

शेष पृष्ठ 7 पर ☞

thearyasamaj.org

शिक्षा मन्त्र से समान रूप से विकास करें

● डा. अशोक आर्य

हम जानते हैं कि वेद में विश्व की सब समस्याओं का समाधान मिलता है। हम शिक्षा सम्बन्धी समस्याओं पर वेद के माध्यम से समाधान खोज रहे हैं। इस समाधान खोजने में क्रम में ही आगे बढ़ते हुए वेद हमें शिक्षा देता है कि हम शिक्षा के माध्यम से जहाँ अपने व समाज के सब वर्गों का चरित्र निर्माण करें, वहां हम यह भी ध्येय बना कर चलें कि हम समान रूप से विकास का माध्यम रखें। इस का भाव यह है कि हम शरीर, मन, वाणी और आत्मा की शक्तियों का भी समान रूप में विकास करें। इस सम्बन्ध में यजुर्वेद अध्याय छः (6) का मन्त्र संख्या 15 हमें इस प्रकार उपदेश कर रहा है:–

मनस्तऽआप्यायतां वाक् तऽआप्यायतां प्राणस्तऽआप्यायतां चक्षुस्तऽआप्यायतां श्रोत्रं–तऽआप्यायतां। यत्ते क्रूरं यदास्तिहातं तत्तऽआप्यातां निष्टयायतां तत्ते शुध्यतु शाहोब्हय:।
ओषधे त्रायस्व स्वधिते मैंन ॱहिॱसी।।

यजुर्वेद 6.15।।

मन्त्र के माध्यम से आचार्य अपने शिष्यों को उपदेश करते हुए कह रहे हैं कि हे शिष्यो जो शिक्षाएँ तुम्हें दी हैं, जो सत्यकर्म के करने का उपदेश तुम्हें किया है। उस अनुष्ठान तथा शिक्षाओं से तुम्हारे मन, वाणी, प्राण, चक्षु, कर्ण आदि इन्द्रियों की शक्ति बढ़े। हम जानते हैं कि मन की दृढ़ता तथा इसे भटकने से बचाते हुए सन्मार्ग पर चलाना ही मन की दृढ़ता मानी जाती है। प्राणवायु ठीक प्रकार से काम करे, यह ठीक से श्वास प्रक्रिया को चलावे। यह ही प्राण वायु की शक्ति है। आँख हमारे जीवन को देखने की शक्ति देती है, यह हमें संसार से जोड़ती है। आँख में निरन्तर देखने की शक्ति बनी रहे, यह ही आँख की शक्ति है। कान हमें संसार से श्रवण के माध्यम से जोड़ने वाले होते हैं। जब तक इन में श्रवण की शक्ति है, तब तक ही यह हमारे लिये उपयोगी हैं अन्यथा यह एक चिन्ह मात्र ही बनकर रह जाते हैं। इसलिए सुनना ही कान की शक्ति है। हमारी इन इन्द्रियों की सब शक्तियाँ निरंतर न केवल बनी ही रहें, अपितु यह निरंतर प्रगति पथ पर आगे निकलती रहें तथा यह वृद्धि की ओर ही बढ़ती रहें।

इस के साथ ही अपने उपदेश के क्रम को आगे बढ़ाते हुए गुरु अपने शिष्य को उपदेश कर रहा है कि मानव होने के नाते तेरे स्वभाव में अनेक प्रकार की विसंगतियाँ हो सकती है। इन विसंगतियों में एक का नाम है क्रूरता। यह क्रूरता मानव की प्रगति के अंदर एक बहुत बड़ी बाधा होती है। इस क्रूरता से प्रगति के, शिक्षा पाने के सब मार्ग रुक जाते हैं। इसलिए यह आवश्यक कि हम इस क्रूरता को अपने अंदर प्रवेश न करने दें, यदि यह क्रूरता हमारे अंदर आ चुकी है तो हम ऐसा यत्न करें, ऐसा उपाय करें कि हम इस से मुक्त हो सकें, इसे अपने से दूर कर सकें। जितना शीघ्र हम इस से छुटकारा पा सकेंगे, जितना शीघ्र हम इसे धो कर साफ़ सुथरा बना पावेंगे उतना ही शीघ्र हम सुशिक्षा को पाने में सफल होंगे। उतना ही शीघ्र तेरे अंदर की स्थिरता। तेरे अंदर के धैर्य आदि गुण बढ़ेंगे, वृद्धि को प्राप्त होंगे।

गुरु पत्नी भी गुरु के समान ही ब्रह्मचारियों का भला चाहती है। इसलिए वह अपने पति अर्थात् आचार्य को औषध के नाम से पुकारती है। इस का कारण यह है कि प्रथमतया तो गुरु दवाई की ही भाँति कार्य करता है। इस प्रकार कार्य करते हुए वह अपने शिष्य के जीवन में ठीक से वैसे ही प्रभाव करता है, जिस प्रकार एक औषध एक रोगी के जीवन में क्रिया करती है। आचार्य अपने शिष्य के सब प्रकार के अज्ञान रूपी रोगों का नाश कर उसे ज्ञान का प्रकाश रूपी शक्ति देता है। इसलिए गुरु औषध के ही समान रोग के निवारण की शक्ति रखता है।

इसके अतिरिक्त गुरु को औषध कहने का दूसरा मनोरथ यह है कि

औषधविज्ञान धीयतेऽस्मितत सम्बुद्धौ विग्यनिवराद्यापक अत्र गतो गत्स्त्रयोऽर्था ज्ञानं गमनं प्राप्तिश्च विज्ञानं गृह्मते।।

इस का भाव यह है कि गुरु के इस सुन्दर उपदेश को सुनने के पश्चात् इन शब्दों के माध्यम से शिष्य अपने गुरु से हाथ जोड़ कर कह रहा है कि संसार के सब ज्ञानियों में श्रेष्ठ है मेरे गुरु देव! हे मेरे आचार्य महोदय! आप इस शिष्य की ज्ञान के द्वारा भली भाँति रक्षा करें। आप का यह शिष्य अपनी रक्षा कर पाने में सक्षम नहीं है। आप अपनी दया के रूप में अपने इस शिष्य को ज्ञान रूप इतनी शक्ति दें कि यह शिष्य अपनी रक्षा स्वयं करने की शक्ति से संपन्न हो जाये।

जब गुरु को उसकी पत्नी ने औषध का नाम दिया तो गुरु ने भी अपनी पत्नी को, जो विदुषी है, वेद ज्ञान को जानती है, समझती है तथा इस ज्ञान का उपदेश करने की उसमें शक्ति भी है, ऐसी पत्नी को **'स्वधिति'** के नाम से सम्बोधन करते हैं। इस **स्वधिति** का प्रयोग आचार्य क्यों करते हैं? इसलिए कि वह भी शिक्षा बाँटने के क्षेत्र में, ज्ञान का विस्तार करने के क्षेत्र में उनसे किंचित् भी कम नहीं है, वह भी आत्म शक्ति को धारण किए हुए है, वह भी वेद की बहुत बड़ी विद्वान् होने के कारण विदुषी है तथा वेद ज्ञान की उत्तम आचार्या है। इस कारण आचार्य अपनी पत्नी को इस सम्मान पूर्ण पद से संबोधित करते हैं। आचार्य उसे इस प्रकार कहते हैं कि जिस प्रकार तुम मुझे मेरे शिष्यों के ज्ञान को बढ़ाने का उपदेश करती, उस प्रकार ही तुम भी अपनी शिष्य कन्याओं का ज्ञान निरंतर बढ़ाती रहो तथा इस ज्ञान के उपदेश से उनकी रक्षा करो तथा उन्हें अपनी रक्षा करने की शक्ति दो। इस काम में कभी हिंसा मत करो अर्थात् इस में किसी प्रकार की कमी न आने देना।

स्वामी दयानन्द ने भी इस का संस्कृत में बड़ा ही सुन्दर विवरण दिया है, जिसका हिंदी भाव पंडित धर्मदेव जी विद्यामार्तंड ने इस प्रकार किया है: **"गुरु को सब प्रकार से उन्नत करने तथा उनकी प्राण, वाणी, मन, आँख, कान आदि इन्द्रियों की शक्ति को बढ़ाने के लिए सदा प्रयत्न करते रहें। अध्यापिकाएं भी अपनी शिष्याओं के प्रति इसी कर्तव्य का पालन करें।'** इस प्रकार समस्त शक्तियों के सम विकास को यहाँ का एक प्रधान ध्येय बताया है।

इस बस से यह तथ्य सामने आता है कि जहाँ वेद ने शिक्षार्थ सब अंगों का समान रूप से विकास करने का आदेश दिया है, वेद के सच्चे प्रचारक व अनुगामी होने के कारण स्वामी दयानन्द सरस्वती जी भी वेद की बात को शब्दशः मानते हुए ठीक वैसा ही उपदेश करते हैं, जैसा कि वेद में किया है। इसलिए शिष्य के सब अंगों को शक्ति देना, गति देना तथा वह ठीक से काम कर सकें, उन्हें इस योग्य बनाना ही गुरु का मुख्य कार्य है। इसके लिए इन सब अंगों का समान रूप से विकास करने का गुरु सदा प्रयत्न करता है।

104 शिप्रा अपार्टमेन्ट,
कौशाम्बी 201010
गाजियाबाद
दूरभाष 0971882068

☞ *पृष्ठ 03 का शेष*

दो रास्ते

सूर्य के पीछे चलना है मेरे भाई! सूर्य के अनुसार चलना है तो अपने केन्द्र पर स्थिर रहो। मानवता को मत छोड़ो, मानवता तुम्हारा केन्द्र है। अपने–आप को भी मानव बना, दूसरों को भी। दूसरे मनुष्यों के साथ मनुष्यों–जैसा व्यवहार करो।

परन्तु आज यह मानवता ही समाप्त हुई जाती है–

सच लुट गया सरे–आम, स्वप्न बाकी है,
अब तो शबनम की जगह भी तपन बाकी है।
आज आँखें भी हैरत से हैं परेशाँ,
इंसान लापता है, कफ़न बाकी है।

मानव का ढाँचा रह गया है आज। मानवता खो गई। देखो! वेद भगवान ने कहीं यह नहीं कहा कि तुम हिन्दू बनो, मुसलमान बनो, सिख, आर्यसमाजी, ईसाई, हिन्दुस्तानी, चीनी, जापानी आदि बनो। वेद भगवान् केवल एक बात कहता है–

"मनुर्भव"

'इन्सान बनो! ऐ इन्सान! मैंने तुझे इन्सान का शरीर दिया। अब इन्सान की तरह रह, इन्सान बनके रह–

तन्तुं तन्वन् रजसो भानुमन्विहि
ज्योतिष्मतः पथो रक्ष धिया कृतान्।
अनुल्बणं वयत जोगवामपो
मनुर्भव जनया दैव्यं जनम्।।

–ऋ. 10/53/6

'ऐ इन्सान! इस सूर्य के रास्ते पर चल। देख, यह किस तरह चमकती हुई किरणों का ताना–बुनता हुआ भी दुनिया को रोशनी देने का काम करता है, रोशनी की दुनिया को आबाद किये देता है। तू भी ऐसा ही कर! इस दुनिया के अन्दर जिन्दगी का ताना–बाना बुनता हुआ भी अपनी बुद्धि को रोशन बनाये रख। इस रोशनी से अपने रास्तों को रोशन बना दे। स्वयं इन्सान बन, दूसरों को भी इन्सान बना।'

यह है वेद का उपदेश–

मनुर्भव जनया दैव्यं जनम्।

'स्वयं इन्सान बन, दूसरों को भी भगवान् का भक्त बनाकर मानवता के रास्ते पर चलना सिखा।' यह बात सीख। किससे? इस चमकते हुए सूर्य से।

यह है सूर्य के पीछे चलने, सूर्य के अनुसार अपने जीवन को बनाने का अर्थ।

सूर्य के गुण अभी और भी हैं परन्तु आज समय हो गया, इसलिए बाक़ी बातें कल कहूँगा, कल मेरा आखिरी दिन है।

(और तब वह स्वयं ही ज़ोर से हँस उठे और बोले–)

मेरा नहीं, कथा का आखिरी दिन है और मुझे बातें कहनी हैं बहुत–सी, इसलिए कल ज़रा जल्दी आ जाना, ताकि मैं सब न सही, कुछ–न–कुछ बातें तो कह सकूँ।

शेष अगले अंक में....

thearyasamaj.org

संगच्छध्वं

● नरेन्द्र आहूजा 'विवेक'

किसी भी राष्ट्र की आयु के संदर्भ में मात्र 67 वर्ष की अवस्था को बाल्यावस्था ही कहा जा सकता है लेकिन बाल्यावस्था में ही किसी का इतनी भयावह बीमारियों से ग्रस्त हो जाना निश्चित रूप से चिंता उत्पन्न करता है। आज देश में व्याप्त बीमारियों क्षेत्रवाद, भाषावाद, सांप्रदायिकता, जातिवाद, संसाधनों के बंटवारे पर झगड़े, भ्रष्टाचार, प्राकृतिक संसाधनों की लूट, प्रकृति का अत्यधिक दोहन, आतंकवाद, नक्सलवाद, बेरोजगारी जैसी समस्याएँ राष्ट्र की इतनी छोटी आयु में दीमक की भाँति लग गई हैं और राष्ट्र को अंदर ही अंदर खोखला कर रही हैं। ऐसी स्थिति में राष्ट्र के प्रति लगाव वाले सभी राष्ट्रवादियों जागरूक नागरिकों का परम दायित्व बन जाता है कि इन बीमारियों का इलाज करें अन्यथा इन व्याधियों से ग्रस्त हमारा राष्ट्र तथाकथित झूठी विकास की अवधारणा पर चलता हुआ विनाश को प्राप्त हो जायेगा। हमें इन बीमारियों के मुख्य कारण विकास की सम्मोहित करती झूठी अवधारणा के सम्मोहन को समझकर तोड़ना होगा। आज इस विकास के नाम पर पाश्चात्य अंधानुकरण करते हुए आध्यात्मिक शिखर से बड़ी तेजी के साथ गहरी खाइयों की ओर फिसलते लुढ़कते जा रहे हैं। इस पाश्चात्य अंधानुकरण की झूठी चकाचौंध में हमें अपनी दशा और दिशा दिखाई नहीं दे रही जैसे किसी वाहन की तीव्र रोशनी में हमें बाकी कुछ भी दिखाई नहीं देता। हम शिखर से खाइयों की ओर इतनी तेज़ी से फिसल रहे हैं कि इस गति के रोमांच को हम विकास की गति समझ रहे हैं। *स्पीड थ्रिल्स बट किल्स* जिन खाइयों की तरफ हम तेजी से फिसल रहे हैं उन खाइयों में पहले से ही कई संस्कृतियों मिस्र, रोम, यूनान आदि के कंकाल अट्टाहस करते हुए आह्वान कर रहे हैं, आओ तुम भी इन खाइयों में समा जाओ।

देश में व्याप्त व्याधियों के मूल कारण विकास की झूठी अवधारणा की दशा दिशा को समझ कर इसे ठीक करना होगा वर्ना आने वाली पीढ़ियाँ हमसे यह यक्ष प्रश्न पूछेगी कि संक्रमण के उस दौर में क्या आपने अपनी भूमिका को निर्वहन किया? और उस समय हमारे पास जुए में हारे पांडवों की भाँति चुपचाप सिर झुकाकर बैठे रहने के अलावा कोई अन्य उपाय नहीं होगा। यह भी कोई निश्चित नहीं कि इतनी गंभीर व्याधियों से ग्रस्त राष्ट्र की इस दुर्दशा के बाद हम स्वयं भी बच पायेंगे।

देश में व्याप्त व्याधियों के मूल कारण विकास की झूठी अवधारणा की दशा दिशा को समझ कर इसे ठीक करना होगा वर्ना आने वाली पीढ़ियाँ हमसे यह यक्ष प्रश्न पूछेगी कि संक्रमण के उस दौर में क्या आपने अपनी भूमिका को निर्वहन किया? और उस समय हमारे पास जुए में हारे पांडवों की भाँति चुपचाप सिर झुकाकर बैठे रहने के अलावा कोई अन्य उपाय नहीं होगा। यह भी कोई निश्चित नहीं कि इतनी गंभीर व्याधियों से ग्रस्त राष्ट्र की इस दुर्दशा के बाद हम स्वयं भी बच पायेंगे।

वर्तमान परिस्थिति में राष्ट्र के समक्ष सुरसा की भांति मुँह बाए खड़ी इन समस्याओं के निदान के लिए देश के अंधे विकास के नाम पर चल रही पाश्चात्य अंधानुकरण भोगवाद की दशा और दिशा को समझकर इसे परिवर्तित करना होगा। इसके लिए हमें वैदिक आर्य विचारधारा में उपायों की खोज करनी पड़ेगी। ऋग्वेद के अंतिम मंडल तथा अथर्ववेद एवं तैत्तिरीय ब्राह्मण में संगठन सूक्त के नाम से सुप्रसिद्ध मंत्र के एक छोटे से अंश को समझने से भी कल्याण संभव है– **संगच्छध्वं– मिलकर चलो, संवदध्वं–** संवाद अर्थात आपस में प्रेमपूर्वक बातें करो **सं वो मनांसि जानताम्–** तुम्हारे मिलकर सत्य असत्य निर्णय के लिए सदा विचार किया करें।

देश में व्याप्त समस्याओं को समझकर उनके समाधान के लिए वेद भगवान ने इस संगठन सूक्त से आदेश दिया 'मिलकर चलो' अब प्रश्न उठता है कि मिलकर कैसे चले क्या आकाश में उड़ रही गिद्धों एवं चीलों की भाँति किसी मरे हुए जानवर का भक्षण करने के लिए एक स्थान पर इकट्ठे हो जाने को ही 'मिल कर चलना' कहेंगे। शायद नहीं, क्योंकि बुद्धिहीन प्राणियों द्वारा अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए मिलना या झुंड बनाना 'समज' कहलाता है। मनुष्य तो एक सामाजिक प्राणी है और उसके लिए मिलकर चलने के लिए बुद्धिपूर्वक सोचविचार कर बनाई गई योजना से बना संगठन या समाज आवश्यक है। मननशील या विचारवान होना मनुष्य होने का प्रथम आवश्यक गुण है। अतः 'संगच्छध्वं' मिल कर चलने के लिए प्रथम आवश्यकता है कि मनुष्य विचार करते हुए योजना बनाकर श्रेष्ठ लोगों के समान अर्थात समाज का गठन करके मिल कर चले।

अब दूसरा प्रश्न उठता है कि 'मिल कर चलना' किधर है इसके लिए हमें अपने अर्थात् मनुष्य जीवन के उद्देश्य को समझना होगा। क्या मनुष्य के जीवन का उद्देश्य ईश्वर हमारे उपयोग के लिए प्रदत्त साधन अर्थात शरीर के सुख के साधन एकत्रित करना है। यदि हम केवल ऐसा ही समझते है तो शायद हमारी स्थिति 'साधन आधीन' हो जाने वाला है जो कि पराधीन से भी बदतर है और जीवन यात्रा में दुर्घटना को अवश्यंभावी बना देती है। यह ठीक है कि साधक द्वारा साधना के लिए साधन का ठीक होना साध्य अर्थात उद्देश्य की प्राप्ति के अत्यंत आवश्यक है। हम इस साध्य अर्थात् उद्देश्य प्राप्ति के लिए साधन एकत्रित करने के लिए क्या करें। तो इस प्रश्न का उत्तर यजुर्वेद के चालीसवें अध्याय के प्रथम मंत्र में मिलता है 'तेन त्यक्तेन भुंजीथा' अर्थात समस्त ऐश्वर्य प्रदान करने वाले परमपिता परमेश्वर द्वारा प्रदत्त प्रकृति के साधों का त्यागपूर्वक भाग वा उपयोग करें।

लेकिन इन साधनों को पाकर भी चलने की दिशा का प्रश्न अनुत्तरित रह जाता है इसके लिए हमें अपने लक्ष्य वा उद्देश्य को समझना होगा केवल मनुष्य जीवन ही ऐसा है जो कि भोग के साथ साथ कर्म योनि भी है और मनुष्य के जीवन का वास्तविक उद्देश्य साधक द्वारा साधन का उपयोग करते हुए साध्य की प्राप्ति है इसी को उपासना भी कहा जाता है इस में जब साधक और साध्य एकरूप होकर मनुष्य का आत्मा मोक्ष को प्राप्त कर परम आनंद की अवस्था में आ जाता है इस मोक्ष प्राप्ति को ही मनुष्य को श्रेय मार्ग पर मनुष्य एक सामाजिक प्राणी होते हुए संसार के समस्त श्रेष्ठ पुरुषों के साथ संसार के वैचारिक दृष्टि से महानतम संगठन आर्यसमाज के साथ पुरातन सनातन वैदिक आर्य विचारधारा के मार्ग पर चलकर निस्वार्थ भाव से परोपकार कार्य त्यागपूर्वक साधनों का उपयोग करते हुए अपने मनुष्य जीवन के वास्तविक उद्देश्य अर्थात् मोक्षकी प्राप्ति कर पायेंगे और कह पायेंगे 'सगच्छध्वं'।

602 जी एच 53
सैक्टर 20 पंचकूला
मो. 9467608686

☞ *पृष्ठ 05 का शेष*

वक्त के साये तले,...

की ओर बढ़ने लगे हैं। 15 अगस्त को भारत के नव–निर्वाचित अलौकिक व्यक्तित्व, विशिष्ट चुम्बकीय आकर्षक मुद्रा के धनी श्री नरेन्द्र मोदी राष्ट्र के नाम देश–विकास की गति, स्थिति व मति का हृदय की गहराइयों व बलिदानी भावनाओं से कीर्ति स्तम्भ का शिलान्यास किया है जिससे। एक स्वर्णिम–युग प्रारम्भ हुआ है। हमें आभास होता है कि हिन्दुस्तान की जनता का अटूट–विश्वास प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी की कार्य–प्रणाली पर अडिग–चट्टान की तरह कायम है। थोड़े ही समय में जिस सार्थक राष्ट्र–नीति को अपना कर आगे बढ़े हैं हिन्दूस्तान को उस पर गर्व अनुभव हो रहा है। प्रत्येक प्रकार के साये तले का अनुभव समेटे हुए, देश विकास की ओर बढ़ने का संकल्प ले रहा है। अब तो यह संकल्प लोकतांत्रिक प्रणाली में प्रधानमंत्री व संसद की कार्य क्षमता पर निर्भर करता है। मानवीय प्रधानमंत्री के दिल की गहराइयों में क्या है? अभी अनुमान ही लगा सकते हैं। वास्तविकता तो विकास की राह को देखने पश्चात ही दिल की गहराईयों का पता चल सकेगा। माँ–बोली पंजाबी के प्रसिद्ध काव्य श्री वारस–शाह का यह पद स्मरण आ जाता है :

'वारसशाह न भेद सन्दूक खुल्ले,
भावें जाना दा जन्दरा टुट जावें'

अभी पता नहीं चल रहा कि देश का विकास व जन हित के कार्य कब कार्यान्वित होंगे।

अभी समय है और वक्त का साया मजबूत है। अगर सामयिक केन्द्र सरकार ने गरीब की झोंपड़ी को समझने का प्रयास कर लिया, आह की लपटों की लालिमा को अनुभव कर लिया, अदम्य साहस का परिचय दे दिया, वक्त के साये तले देश–विकास और स्वतंत्रता के कीर्ति–स्तम्भ के प्रति आवश्यक बल और विकेक का प्रयोग कर लिया, तो निश्चय ही हिन्दुस्तान के नए युग का इतिहास रचा जाएगा और हिन्दुस्तान का भाग्य उदय होगा। किसी कवि ने ठीक ही कहा है :

जो बड़भागी साहसी, करते है शुभ काम।
रहते हैं संसार में, जीवित उनके नाम।।

–जालन्धर (पंजाब)

परिवार की खुशहाली में महिलाओं की भागीदारी

● हरिश्चन्द्र आर्य

परिवार एक सार्वभौमिक संस्था है। भारत में परिवार की महत्ता विश्व के अन्य देशों में कहीं अधिक है। भारत में स्त्री को श्रद्धा की दृष्टि से देखा जाता है तथा स्त्री को पुरुष की अर्द्धांगिनी कहा जाता है। मनु ने स्त्रियों की महत्ता को बताते हुए कहा है कि '' जहाँ नारियों की पूजा होती है, वहाँ देवताओं का वास होता है। जहाँ स्त्रियाँ तंग की जाती हैं, दुःखी की जाती हैं, वहाँ परिवार बिल्कुल नष्ट हो जाते हैं। परिवार में स्त्रियों को उच्च स्थान प्रदान करना भी भारतीय परिवार की विशेषता है।

परिवार विशेष रूप से भारतीय परिवार एक ऐसी संस्था है जिसमें सभी सदस्य पारस्पारिक सहयोग से कार्य करते हैं और यही एक सुखी, समृद्ध और खुशहाल परिवार का आधार है। परिवार की सर्वांगीण समृद्धि और खुशहाली की प्रक्रिया में नारी एक केन्द्रीय शक्ति की भूमिका निभाती है। खुशहाली अर्थात सुख एवं समृद्धि किसी भी परिवार में तभी आ सकती है जब वहाँ नारी स्वस्थ एवं प्रसन्न होगी। सुखी परिवार के लिए शारीरिक मजबूती भी आवश्यक है। सुखी परिवार की एक जरुरी शर्त है– स्वस्थ परिवार। इसकी जिम्मेदारी घर को चलाने वाली महिला पर आ ही जाती है। बच्चों का उचित लालन–पालन, बड़ों की देखभाल आदि, सभी जिम्मेदारियाँ परिवार की महिला को ही वहन करनी होती हैं।

स्वस्थ रहना जिन्दगी की पहली शर्त है

परिवार में पारिवारिक सामंजस्य का केन्द्र भी महिला है। भारतीय परिवार में पत्नी या माता का एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। परिवार में गृहिणी को पत्नी, माता तथा गृहस्वामिनी के रूप में अलग–अलग भूमिका निभानी पड़ती है तथा समायोजन स्थापित करना पड़ता है। गृहस्थ जीवन में आने वाले उत्कर्ष और अपकर्ष में नारी की भूमिका का कोई विकल्प नहीं है। पत्नी के उपरान्त महिला माता भी बनती है तथा उसे परिवार में माता के रुप में भी भूमिका निभानी पड़ती है। नारी के बिना अधूरा है परिवार। माँ के कर्तव्य बच्चे के पैदा होने से पहले ही शुरु हो जाते हैं। माँ जो भी सोचती है महसूस करती है, जैसा दिन–प्रतिदिन व्यवहार करती है, सभी बच्चे के शारीरिक व मानसिक विकास को प्रभावित करता है। बच्चे के जन्म के पश्चात माँ के कर्तव्य और भी अधिक बढ़ जाते हैं। एक आदर्श माँ ही बच्चे के लालन–पालन का सही तरीका जानती है। बच्चे के बोलने से पहले ही माँ को उसकी जरुरतों का एहसास हो जाता है। जैसे –जैसे बच्चा बड़ा होता है उसकी शिक्षा भी माँ की गोद से ही शुरू हो जाती है। माँ ही बच्चे की प्राथमिक शिक्षिका है। इस अवस्था में जो भी बच्चा सीखता है वही उसके जीवन का हिस्सा बन जाता है। माँ एक समझौता करने वाली आत्मा है। वह अक्सर पति का ध्यान भी बच्चों की तरफ आकर्षित करती है। कभी–कभी पिता के क्रोधित होने पर माँ उस क्रोध को शांत करती है ताकि उसके परिवार का वातावरण शांत रहे और परिवार खुशहाल रहे। माँ एक पालक–पोषक, मार्गदर्शक और मित्र है। माँ निःस्वार्थ भाव से अपना कर्तव्य निभाती चली जाती है। उसकी केवल एक इच्छा होती है कि उसका पूरा परिवार दिनों–दिन तरक्की करे खुशहाल रहे।

एक जमाना था जब महिलाओं की स्थिति केवल रसोई तक सीमित थी, आज महिलाओं ने परिवार की बागडोर अपने हाथ में लेली है जिससे एक सुखद परिवर्तन आया है। यह मान्यता काफी पुरानी है कि परिवार को चलाने की जिम्मेदारी केवल पुरुष की है। पिछले बीस सालों में हमारे समाज में कई तब्दीलियाँ आई हैं। कई सामाजिक बेड़ियाँ कमजोर हुई हैं, कई टूटी हैं। इसका नतीजा काफी सकारात्मक रहा। शिक्षा का जमकर प्रसार हुआ। हमारे समाज में पारिवारिक रिश्तों में बड़ा भारी बदलाव आया है। आज से दो दशक पहले तक यह माना जाता था कि बच्चों को कड़े अनुशासन में रखना चाहिए तभी वे जिंदगी में आगे बढ़ सकते हैं। बच्चों को अनुशासित रखने की जिम्मेदारी पिता की होती थी। पिता के घर में आते ही कर्फ्यू का सा माहौल हो जाता था। माँ डरी सी, सहमी सी रसोई में लगी रहती। लेकिन अब माँ रसोई तक ही सिमटी नहीं रह गई है। वह अब बच्चों के शारीरिक, मानसिक विकास की ओर सजग हो गई है। शिक्षित और जागरूक होने के कारण माँएँ बच्चों की भावनात्मक जरूरतें बेहतर तरीके से समझ पाती हैं। जैसे बच्चों को हर विषय पर सलाह देना, बात करना, उम्र के अनुसार उनकी हर छोटी बड़ी समस्या का हल निकालना। महिला के जागरूक होने से परिवार की खुशहाली पर प्रत्यक्ष प्रभाव तो पड़ता ही है। परिवार की स्त्री के एक गृहस्वामिनी के रूप में मुख्य कर्तव्य हैं। अपने व्यवहार से सभी संबंधियों को सन्तुष्ट रखना, ससुराल के संबंधियों के प्रति सम्मान एवं स्नेह का व्यवहार करने से परिवार का वातावरण सौहार्दपूर्ण बना रहता है। एक गृहस्वामिनी के रूप में स्त्री घर के विभिन्न कार्यो की व्यवस्था करती है।

परिवार में गृहिणी को बहुपक्षीय भूमिका निभानी पड़ती है। वर्तमान में अनेक नगरीय परिवारों में महिलाएँ गृह दायित्वों के साथ–साथ कुछ व्यवहारिक दायित्व भी निभाने लगी हैं। अनेक महिलाएँ किसी ने किसी व्यवसाय से भी सम्बद्ध होने लगीं हैं। वे या तो नौकरी करती हैं अथवा कोई अपना व्यवसाय करती हैं। इस स्थिति में उन्हें दोहरी भूमिका निभानी पड़ती है। आर्थिक क्षेत्र में भागीदारी बढ़ जाने पर भी स्त्री के पारिवारिक दायित्व कम नहीं होते। अतः वर्तमान में सामंजस्य और संतुलन बनाने में नारी की भागीदारी अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाती है। परिवार की एकता, प्रगति एवं समृद्धि में गृहिणी का योगदान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। गृहिणी का दायित्व है कि वह परिवार के सदस्यों में किसी प्रकार का भेदभाव या पक्षापात न करे। प्रत्येक सदस्य को यथोचित सम्मान एवं स्नेह दे तथा उनकी सुविधाओं व आवश्यकताओं की पूर्ति के प्रसास करे। इसके अतिरिक्त गृहिणी का दायित्व है कि वह परिवार के प्रत्येक सदस्य की सुविधा एवं कार्यक्षमता तथा रूचि को ध्यान में रखकर गृह कार्य सौंपे। कोई भी समझदार गृहिणी ऐसा दृष्टिकोण अपनाकर परिवार की एकता को बनाए रख सकती है। परिवार की महिला की इस महत्त्वपूर्ण भूमिका को ध्यान में रखते हुए ही महिला को परिवार की धुरी कहा जाता है। परिवार का सम्पूर्ण अस्तित्व नारी की मजबूत इच्छा शक्ति पर आधारित है। बिना नारी के गृह की कल्पना भी नहीं की जा सकती कहा जाता है कि–ईटों से मकान बनता है और परिवार के सदस्यों से घर बसता है, और नारी इस घर की नीव है। जिस पर संस्कारों और सदाचरण से युक्त सदस्यों के स्तंभ और खुशहाल परिवार की मजबूत इमारत खड़ी रहती है।

नारी और पुरुष दोनों गृहस्थी की गाड़ी के दो पहिए हैं। प्राकृतिक रूप से नारी को संस्कार भावना और संवेदना की शक्ति अधिक मिलती है। सहिष्णुता और सामंजस्य की क्षमता अधिक प्रदान की गई है। यही कारण है कि पारिवारिक समृद्धि और खुशहाली में नारी की भागीदारी अधिक महत्त्वपूर्ण है।

अधिष्ठता, उपदेश विभाग, प्रचार कार्यालय मौ0 काली पगड़ी, अमरोहा05925–263422

कुष्ठ रोगियों के लिए होमियोपैथी चिकित्सा एक वरदान

● डॉ. विद्याकान्त त्रिवेदी

कोढ़ या कुष्ठ रोग (लिप्रोसी) या हन्सेन रोग एक जीर्ण रोग हैं। जो माइकोबैक्टिरियम लेप्राई नामक जीवाणु (बैक्टिरिया) के कारण होता है। यह मुख्य रूप से मानव त्वचा, ऊपरी श्वसन पथ की श्लेष्मिका, परिधीय तंत्रिकाओं, आंखों और शरीर के कुछ अन्य क्षेत्रों को प्रभावित करता है। यह न तो वंशागत है और न ही दैवीय प्रकोप बल्कि यह एक रोगाणु से होता है। सामान्यतः त्वचा पर पाये जाने वाले पीले या ताम्र रंग के धब्बे जो सुन्न हों या रंग तथा गठन में परिवर्तन दिखाई दे, तो यह कुष्ठ रोग के लक्षण हो सकते हैं। यह रोग छूत से नहीं फैलता। कुष्ठ की गणना संसार के प्राचीनतम ज्ञात रोगों में की जाती है। इसका उल्लेख चरक और सुश्रुत ने अपने ग्रंथों में किया है। उत्तर साइबेरिया को छोड़कर संसार का कोई भाग ऐसा नहीं था जहाँ यह रोग न रहा हो। किन्तु अब ठंडे जलवायु प्रदेश वाले प्रायः सभी देशों में इस रोग का उन्मूलन किया जा चुका है। अब यह अधिकांशतः कर्क रेखा से लगे गर्म देश के उत्तरी और दक्षिणी पट्टी में ही सीमित है और उत्तरी भाग की अपेक्षा दक्षिणी भाग में अधिक है। भारत, अफ्रीका और दक्षिणी अमरीका में यह रोग अधिक व्यापक है। भारत में यह रोग उत्तर की अपेक्षा दक्षिण में अधिक है। उड़ीसा, आंध्रप्रदेश, तमिलनाडु और दक्षिण महाराष्ट्र में यह क्षेत्रीय रोग सरीखा है। उत्तर भारत में यह हिमालय की तराई में ही अधिक देखने में आता है।

विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में कुष्ठरोग

यह रोग संक्रामक है। यह रोग सामान्यतः गंदगी में रहने वाले और समुचित भोजन के अभाव से ग्रस्त लोगों में ही होता है, किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि स्वच्छ और समृद्धिपूर्ण जीवन बितानेवाले वकील, व्यापारी, अध्यापक आदि इस रोग से सर्वथा मुक्त हैं। वे लोग भी इस रोग से ग्रसित पाए जाते हैं।

इस रोग का कारण माइक्रो बैक्टिरियम लेप्रे नामक जीवाणु (बैक्टिरिया) का त्वचा में प्रवेश समझा जाता है। प्रकार – कुष्ठ सामान्यतः तीन प्रकार का ही होता है।

तंत्रिका कुष्ठ :– इसमें शरीर के एक अथवा अनेक अवयवों की संवेदनशीलता समाप्त हो जाती है। सुई चुभोने पर भी मनुष्य किसी प्रकार का कोई कष्ट अनुभव नहीं करता।

ग्रंथि कुष्ठ:– इसमें शरीर के किसी भी भाग में त्वचा से भिन्न रंग के धब्बे या चकते पड़ जाते हैं अथवा शरीर में गाँठे निकल आती है।

मिश्रित कुष्ठ:– इसमें शरीर के अवयवों की संवेदनशीलता समाप्त होने के साथ–साथ त्वचा में चकते भी पड़ते हैं और गाँठे में निकलती है।

इस रोग का संक्रमण किसी रोग पर कब और किस प्रकार हुआ, इसका निर्णय कर सकना संप्रति असंभव है। अन्य रोगों

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

thearyasamaj.org

गुड गवर्नेंस बनाम राजधर्म अर्थात् दण्ड विधान

● रवीन्द्र पोतदार

राजधर्म का पालन करें" ऐसा मुद्दा एक पार्टी के पक्षी (पक्षधारी) और विपक्षी विवाद स्वरूप उठाते रहते हैं। वे इसके तात्पर्य को कितना समझते हैं अथवा सत्यार्थ को जाने बिना कुतर्क को कितना प्रश्रय देते हैं यह बात इस शास्त्रार्थ से स्पष्ट हो जाएगी।

"अथ राज धर्मान् व्याख्यास्याम:" ऐसा लेख महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश के छठे समुल्लास में किया है। कहा है कि जैसा परम विद्वान् ब्राह्मण होता है वैसा विद्वान सुशिक्षित होकर क्षत्रिय को योग्य है कि इस राज्य की यथावत् करें।

ऋग्वेद में कथन आया है कि **"त्रीणि राजाना......"** 3.38.6 अर्थात् राजा और प्रजा के पुरुष अर्थात् शासक वर्ग के चुनाव अधिकारी और जनता मिल के (निष्पक्ष रूप से) सुख प्राप्ति और विज्ञानवृद्धि कारक राजा और प्रजा के संबंध रूप व्यवहार में तीन सभा अर्थात् विद्यार्यसभा, धर्मार्य सभा राजार्यसभा नियत करके बहुत प्रकारके समग्र प्रजा सम्बन्धी मनुष्यादि प्राणियों को सब ओर से विद्या, स्वातन्त्र्य, धर्म, सुशिक्षा और धनादि से अलंकृत करे।

इस राजधर्म को तीनों सभा संग्रामादि की व्यवस्था और सेना मिलकर पालन करें। सभासद् और राजा के लिए भी उचित है कि वे भी सभा की व्यवस्था का पालन करें।

अभिप्राय यह है कि सभा के नेता या सांसद किसी एक को राज्य का स्वतन्त्र अधिकार न देना चाहिए किन्तु नेता को सभापति, तदधीन, सभा। समाधीन राजा (नेता और सभा प्रजा के अधीन और प्रजा(जनता) राजसभा के अधीन रहे।

अगर ऐसा न हो वे तो वह राज्य अव्यवस्था, अराजकता एवं भ्रष्टाचार से युक्त होकर प्रजा के लिये दुर्दैव एवं कठिन हो जाता है। (जैसा कि वर्तमान में हो रहा है।) प्रमत्त नेता प्रजा का नाश करता है अर्थात् किसी को अपने से अधिक न होने देता, श्रीमान् को लूट-खूँट अन्याय से दण्ड देके अपना प्रयोजन पूरा करेगा।

परन्तु "राजधर्म" अन्यन्त कठिन है क्योंकि कहा है **"दण्डः शास्ति प्रजाः"** वही राजा, वही न्यायकर्त्ता, वही आश्रमों का स्थिरकर्त्ता अर्थात् प्रजा के सभी कष्टों को दूर करने वाला है। अतः श्रेष्ठ दण्ड का विधान ही राजधर्म है।

उपरोक्त कथन को हम सप्रमाण आज के सन्दर्भ से अच्छी तरह समझ सकते हैं, यथा – दण्ड प्रधान न्याय पालिका द्वारा शासकों द्वारा पारित हुए निर्णयों को बदलने के लिए पुनर्विचार हेतु प्रेषित करना। शासकों की अक्षमता पर भर्त्सना एवं अपने मातहतों पर स्वयं की देखरेख में कार्यवाही करना। यही नहीं विद्वेष वश व्यक्ति विशेष की घेराबंदी करने पर जाँच बैठा कर "क्लीन चिट" देना व विपरीत अवस्था में दोष की सम्भावना प्रकट करना आदि-आदि।

अब हम इतिहास के गर्त में भी झाँककर देखें कि स्वच्छंद शासकों ने इन पालिकाओं की कमी अथवा संविधान की कमजोर कड़ियों का लाभ लेकर किन अमानवीय यातनाओं से जनता को प्रताड़ित किया, जिसे वे आज भी पशु की भाँति सहन करने को मजबूर हैं!

सर्वप्रथम तो देश के विभाजन को धर्म के आधार पर करने की स्वीकृति देना और किसी राष्ट्रीय नेता द्वारा अपने आश्वासन से आनन-फानन में पलट जाना।

पता नहीं देश के उन नागरिको ने कैसे उस अमानवीय यातना से पूर्ण आदेश का अविरोध पालन किया जिसमें उन्हें न तो पर्याप्त समय दिया गया न सम्पत्ति बटोरने के अधिकार दिए, न यातायात प्रबंध किया गया तथा सुरक्षा की तो ऐसी धज्जियाँ उड़ा दीं कि कत्ले आम की हिटलरी कार्यवाही भी चारोखाने चित्त हो गयी। हाँ चंगेज खाँ तथा तैमूरलंग द्वारा दिल्ली दमन की यादें जरूर ताजा हो गयीं।

कश्मीर पर कबाइली आक्रमण को हम पंचशील द्वारा रोकने में असमर्थ रहे, फलस्वरूप आजादी के बाद हमें एक बार फिर अपनी कमान अंग्रेजों को सौंपनी पड़ी, गनीमत है इमानदारी से उन्होंने हमें वापस सौंप दी! लेकिन-कश्मीर का बड़ा टुकड़ा तो आज तक विवादित बना हुआ है। कैसे सम्भव है कि किसी राजनेता के गलत निर्णय के कारण *यू.एन.ओ.* इतने समय तक उस क्षेत्र को विवादित रख सकता है। इससे तो उसके सार्वभौम होने पर सवाल उठता है।

एक प्रदेश में अनवरत साम्प्रदायिक दंगे होते हैं, दशकों बाद एक शासक अगर उस पर काबू पा लेता, एक दशाब्दी बाद सभी वर्ग के लोग अगर कहते हैं कि "ऐसा प्रयास देशभर में हो" तो ऐसे में हम अपनी अक्षमताओं को न देखें तो न सही परन्तु उस व्यक्ति की क्षमताओं का आकलन तो कर ही सकते हैं।

कैसे किसी प्रदेश में हमारे धर्म निरपेक्ष संविधान के होते हुए एक संप्रदाय के लोगों को स्वतंत्रता प्राप्ति के 40 वर्षो बाद कत्लेआम करते हुए खदेड़ा जा सकता है? क्या वहाँ की सरकार बलों से युक्त नहीं थी या केन्द्रीय सहायता अप्राप्त थी अथवा इच्छा शक्ति थी ही नहीं? पुनः इस देश में क्या इन 25 वर्षो में कोई मानवीय संचेतना का टोटा पड़ा था जो एक दल विशेष को इसे चुनावी मुद्दा बनाना पड़ा? क्या कोई ऐसा मरहम बना है उन यातना सहन करते हुए रह रहे या दिवंगत लोगों को उस यातना से मुक्ति दिला सके, जबकि आप का संविधान कहता है *"जस्टिस डिलेड इज़ जस्टिस डिनाईड"*।

ऐसे कोई वाकये हैं जिन्हें अनगिनत बार कई लोगों ने बयान किया है, कइयों ने आश्वासन भी दिया होगा परन्तु अब ना हमें यह देखना होगा कि कमी हमारे शास्त्रीय लेख की है अथवा हमारी इच्छा शक्ति की?

गोवध के बारे में शास्त्रों में आज्ञा है कि जो व्यक्ति गाय को लात से मारे उसे सीसे (गोली) से बींध दो, तब जो व्यक्ति या संस्था कत्ल करे उसका क्या हो? कैसे आप संविधान के अनुच्छेद 48 की उपेक्षा कर सकते हैं जो सरकार को आदेश देता है कि **"विशिष्टतया गायों और बछड़ों तथा अन्य दुधारु और वाहक पशुओं की नस्लों के परिरक्षण और सुधार के लिए और उनके वध का प्रतिषेध करने के लिए कदम उठाए।"**

गाय के सन्दर्भ में उपरोक्त अनुच्छेद की भावना के विरूद्ध तो राष्ट्र की कल्पना भी नहीं की जा सकती तब हम कैसे कह सकते हैं कि भारत एक राष्ट्र है?

श्री राम के पूर्वज विश्व सम्राट् दिलीप ने गोवंश की अवहेलना होती देख स्वयं एक गाय की सेवा आरम्भ कर दी। गाय जहाँ जाती साथ रहते, जहाँ विश्राम करती वे भी उसकी रक्षा में तत्पर हो विश्राम करते। जब सम्राट् का ऐसा समर्पण और शिक्षा थी तब राष्ट्रवासी उसकी अवहेलना कैसे कर सकते थे अतः पुनः गोपालन एवं राष्ट्र निर्माण प्रारंभ हो गया। लगभग 150 वर्षो पूर्व अंग्रेजों के समय में महर्षि दयानन्द ने गोवध से द्रवित हो **"गोकरुणानिधि"** की रचना की तथा एक करोड़ भारतीयों के हस्ताक्षरित पत्र द्वारा महारानी विक्टोरिया को ज्ञापन सौंपने का मन बनाया था। परन्तु हमारे ही प्रमादी नरेशों ने उनकी इस योजना पर पानी फेर दिया था। वे अंग्रेज शासक तो गोघाती थे परन्तु लगता है अब के शासक तो अंग्रेजों के भी पितातुल्य हैं? खैर अब तो यह भी चुनावी मुद्दा है। **"संघ की राजभाषा हिंदी और लिपि देवनागरी होगी।"** हमारे संविधान में इस वाक्य के सिवा इतने उपबंधादि तथा लेकिन-परन्तु लगे हैं कि मुख्य अनुच्छेद अपनी सार्थकता खो चुका है। अब तो 300 सांसदों से ऊपर की चाह और उसे पाने वालों से ही उम्मीद की जा सकती है कि इसके उपबंध आदि को हटाकर उचित दण्ड व्यवस्था करें जिससे स्वाभिमानी राष्ट्र की श्रेणी में भारत खड़ा हो सके!

केन्द्र की उपेक्षा के बावजूद आज हिन्दी, अंग्रेजी के बराबर क्षमता वाली है, थोड़ा संस्कृत का पुट मिल जाए तो वह उससे आगे बढ़ सकती है। अब देखना यह है कि गुलामी की मानसिकता पहले हटती है या ऐसी मानसिकता के गुलाम! ध्यान रहे कि लगभग 150 वर्षों पूर्व महर्षि दयानन्द ने हिन्दी में सुधार कर सत्यार्थ प्रकाश की रचना की थी जो कि हिन्दी साहित्य की प्रथम पुस्तक है। तथा स्वराज्य के प्रथम उद्घोषक होने के साथ ही हिन्दी को राष्ट्रीय भाषा बनाने का प्रथम उद्घोष भी महर्षि द्वारा किया गया था। (देखे सत्यार्थ प्रकाश 8वाँ सम्मुलास)

बात तो यह है कि अगर हम अहसान फ़रामोश न होते तो क्या संविधान – अनु. 51(च) "हमारी सामाजिक संस्कृति की गौरवशाली परंपरा का महत्त्व समझें और उसका परिपक्षण करें" के रहते महर्षि दयानन्द समेत तमाम ऋषियों के शास्त्र, संस्कृत और वेदों की ऐसी घोर उपेक्षा सम्भव थी? गोधन-भाषा-साहित्य-संस्कृति के बाद राष्ट्र में ग्राम एवं नगरों की बसावट की महती भूमिका है। या कहें कि उपरोक्त चारों का सम्मिलन ही ग्राम एवं नगर का आधार होती है तो अतिशयोक्ति नहीं होगी।

अब तक के हमारे नेताओं ने इन चारों की उपेक्षा कर जिन मेट्रोपॉलिटन अथवा मेगासिटी की कल्पना को साकार किया है उससे पर्यावरण के संरक्षण में गम्भीर अड़चनें पैदा हो गईं हैं, जिन्हें दशाब्दियों तक दूर करना सम्भव नहीं है।

ये तो थीं अब तक के शासकों की नीतिगत भयंकर भूलें परन्तु जो सुधारवादी आगे आ रहे हैं वे जादू का चिराग नहीं लिये हुए हैं, यह समझना होगा। कमियाँ कहीं तो हैं कि एक ही संविधान के

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

thearyasamaj.org

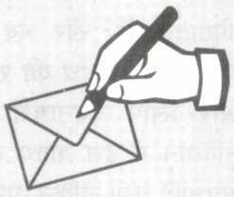

पत्र/कविता

क्यों सफल हो रहे हैं लव-जेहाद?

ज्यादातर आवारा किस्म के ही मुस्लिम लड़कों को मदरसा, मजार आदि में बुलाकर और कुछ पाकेट खर्च भी दे-देकर सिखाया जाता है कि "तुम अपने हाथ में अजमेर शरीफ या किसी मज़ार का कंगन-सूता बांधा करो, अपना उपनाम भोला, राजा, राज, राजू, बाबू, समीर, अमन, रोशन, पप्पू, मुन्ना, नगीना जैसे हिंदू-मुस्लिम उभय-बोधक फारसी-उर्दू के शब्दों से रखो। बातचीत के बीच-बीच में 'अल्ला जाने' के जगह पर 'राम जाने', 'भगवान जाने' कहा करो। सदा हँसते-मुस्कराते-मधुर फिल्मी गीत गाते- गुनगुनाते, सुनते-सुनाते रहो। हिंदू उत्सवों में भी चंदा देकर शरीक होते रहो और वहाँ बड़ों को चाचा, चाची से संबोधन करो, एवं हम उम्र के हिंदू लड़के-लड़कियों के प्रति तन-मन-धन से सहानुभूति और आदर-सम्मान का भाव दिखाते रहो। ताकि पहली ही नज़र में हिन्दू लड़कियाँ तुम्हें उदार और दिलदार हिंदू युवक समझ बैठें।

उन हिंदू लड़कियों का ब्रेनवाश भी किया जाता है कि हिंदुओं में ऊँच-नीच, छूआछूत, रोक-टोक, धर्माडंबर तथा आपसी ईर्ष्या-द्वेष काफी है, जबकि हम लोगों में इतने अधिक आपसी भाइचारे भरे सुंदर मुस्लिम समाज को छोड़कर यदि वापस अपने पिता के घर जाओगी भी तो पिता भले तुझे किसी से ब्याह कर देने के प्रलोभन देकर आज यहाँ से ले जाना चाह रहे हों, किन्तु घर पर ले जाकर तुझे कुलकलंकिनी नापाक हो गयी कह कर मरवा देंगे या सचमुच किसी से तेरी शादी कर भी दिये तो तेरे हिंदू पति (भले ही वह नामर्द हो) को आज या कल जब भी पता चलेगा, उसी दिन तुझे छोड़ देगा या मार देगा।

मदरसा वाले ऐसे लव जेहादी लड़कों को यह भी समझाते है कि "इस 'लव जेहाद' के सिलसिले में कभी कहीं तुम्हें मार-गाली भी खानी पड़े तो खुदा की खिदमत समझकर खुद ही सह लेना, किंतु जब कोई बड़ी घटना होने को होगी तब तो हम सभी लोग तन-मन-धन से खुलकर तेरे साथ खड़े हो ही जायेंगे।"

महीनों – वर्षों तक गुपचुप चलते रहकर सफल होने वाले इस सुनयोजित षडयंत्र का भंडाफोड़ होने पर, सुप्त हिंदू परिवारों की नींद खुलने पर जब वह लड़की अपने दुखी माँ-बाप – भाई की मार्मिक बातों में आकर यदि अपने पिता के घर में लौटने का जरा- सा भी मन बनाती है तब वह मुस्लिम लड़का अपने को निर्दोष व लाचार बताते हुए लड़की से कहता है कि इस्लाम में तेरी खातिरदारी के लिये कई बड़े-बड़े मुस्लिम लोगों की दिलचस्पी रही है। यदि तुम उनके अरमानों को तोड़कर जाओगी तो ये जबरदस्त लोग तुझे तो बाद में, पहले तेरे बाप-भाई को ही खपा (मरवा) देंगे। अतः बाप भाई का भला चाहती हो तो बस उनसे भी ये सब कहे बिना ही चुपचाप यहीं बने रहने का दो टूक निर्णय सुना दो और मनचाही मस्तियाँ यहीं करती रहो।

इस तरह लवजेहाद में फँसी मूर्ख लड़कियों की दो तीन वर्ष में ही इतनी घृणित दुर्गति हो जाती है कि उसे अलग लेख बताना संभव हो सकता है।

लव जेहाद के इस तरह सुनियोजित व्यापक षडयंत्र का मूर्ख हिंदुओं के पास कोई कारगर बचाव न होने के कारण तेजी से अपने ही देश में अल्पसंख्यक होते जा रहे इन लाचार हिंदुओं को बचाने का एक ही उपाय है कि सरकार यथाशीघ्र धर्मांतरण पर रोक लगा दे। किंतु जो मुस्लिमीभाई अपने पूर्वजों के धर्म में शुद्ध होकर 'घर वापसी' करना (लौटना) चाहें तो उनको सहर्ष स्वागत हेतु जातिमुक्त पाखंडमुक्त सच्चा हिंदू समाज सर्वविध तैयार भी रहे।

आर्य प्रहलाद गिरी
निंगा, आसनसोल (प.बं.)
09735132360

****

110वीं जयंती पर विशेष (2 अक्तूबर 2014)

स्व. लालबहादुर शास्त्री को एक श्रद्धांजलि

प्राणों से भी प्यारी थी, तुमको भारत की माटी,
जिससे निर्मित गर्वीली मेवाड़ की हल्दी घाटी।

संकट की घड़ियों में तूने माँ की लाज बचाई,
तुझ फौलादी से टकरा कर शत्रु ने मुंह की खाई।

तेरे 'नैटों' की मार देखकर दंग रह गई दुनियां,
अमरीका तक ने दाबी थीं दांतों बीच अंगुलियाँ।

फिर बरसों बाद सुनी जग ने निर्भीक हुंकार तुम्हारी,
कायरता कर नहीं सकती शांति की पहरेदारी'।

निस्तेज अहिंसा का राजकाज से कोई मेल नहीं है,
राजनीति है राजनीति, बच्चों का खेल नहीं है।

मूर्तरूप हुई तुझ में भारत की परम्परायें,
अंगड़ाई ले उठी पुनः चिर सुप्त वीर गाथायें।

तुझसे प्रेरणा पा सेना ने ऐसा इतिहास रचा था,
'सैबरजैट' और 'पेटन टैंक' का न कहीं निशान बचा था।

"आदेश दिया प्रतिरक्षा का जब सीमा के रखवालों को,
लाहौर बचाना मुश्किल हो गया दिल्ली लेने वालो को"

हे चाणक्य, हे रामचन्द्र, हे कृष्ण सुदर्शनधारी,
तुम्हें जन्म दे धन्य हो गई भारत जननी प्यारी।

अपनी सूझबूझ से तूने हिंदू की निद्रा तोड़ी,
वर्तमान से भव्य अतीत की बिखरी कड़ियाँ जोड़ी।

भारत के गौरव की तूने जग पर धाक बिठा दी,
देखे तुममें दुनिया ने गौतम, प्रताप शिवाजी।

तू सूरज था तम की काली चादर चीर उगा था,
साँझ कहाँ होने पाई तू बीच दोपहर छुपा था।

जनता से आया था तू जनता का सजग सिपाही था,
लाखों माओं का बेटा था लाखों बहनों का भाई था।

तुमको खोकर भारत ने एक स्वर्णिम युग खोया है,
इसीलिये वह लुटा-लुटा सा फूट-फूट रोया है।।

संकट की घड़ियों में ये आकाश के चांद सितारे,
तेरा आह्वान किया करेंगे अपनी भुजा पसारे।

भारत की ओर यदि बुरी नीयत से कोई शत्रु आयेगा,
खड़ा जवानों के रूप में सरहद पे तुम्हें पायेगा।

जब तक बहेगी हिम गिरि से गंगा की निर्मल धारा,
तब तक अमर रहेगा 'बहादुर' प्रेरक नाम तुम्हारा।

तेरे पदचिन्ह अमिर रहेंगे क्रूर काल की छाती पर,
कृतज्ञ राष्ट्र याद करेगा आंखों में आंसू भर कर।।

प्रो. ओम कुमार आर्य
1607/7 जवाहर नगर, पटियाला चौक,
जीन्द (हरियाणा)

thearyasamaj.org

☞ पृष्ठ 09 का शेष

गुड गवर्नेंस बनाम ...

अन्तर्गत लेफ्ट राइट और मध्यस्थ भी हैं। एक दूसरे को साम्प्रदायिक सिद्ध करने की कोशिश करने वाले दोनों ही सत्ता में आते हैं और अच्छा नेतृत्व देते हैं, यह सब कैसे सम्भव हो जाता है? हमारे संविधान में "सामासिक संस्कृति (Rich Heritage of Composit Culture) का महत्त्व समझें और परिरक्षण करें" की बात कही है। क्या है वह संस्कृति? वह मुगल बादशाही के समय की कत्लेआम तथा कथित महानता व औरंगजेबी कट्टरपंथी अथवा गुलाम बनाकर रखने वाली पश्चिमी सभ्यता तो नहीं हो सकती! हाँ कुछ मायने में उन मुट्ठी भर लोगों की कर्मण्यता जिन्होंने राणा सांगा, प्रताप, शिवाजी अथवा लक्ष्मीबाई आदि को सामासिक रूपता में समर्थन दिया वह हो सकती है, दयानन्द के सांस्कृतिक पुनरुत्थान, आर्यसमाज व अन्यों के स्वतंत्रता आन्दोलन में जो सामासिकता दिखी वह भी हो सकती है, लेकिन सच्ची सामासिक संस्कृति तो महाभारत के 1000 वर्ष पूर्व थी। रामायण काल में थी। जब समाज में साम्प्रदायिक और गैर–साम्प्रदायिक दो धड़े थे, जिन्हें देव संस्कृति और राक्षसी सभ्यता नाम दिया था। आश्चर्य यह है कि आज की भाँति वे भी एक ही संविधान–वेद और तदाधारित मनुस्मृति के मानने वाले थे। राक्षस अर्थात् **साक्षराः** अर्थात् जो वेदों के ज्ञान को साक्षरता तक सीमित रखते थे साक्षात्कार नहीं कर पाते थे यही तात्पर्य है। हमारे संविधान का अधिकतर आधार मनुस्मृति ही है परन्तु चूक वहीं है जहाँ **"साक्षरः राक्षसा भवन्ति"** उसमें देवत्व के दिशा निर्देश का अत्यंताभाव है, दण्ड विधान पूरा नही है। दयानन्द का उद्देश्य आर्य–समाज की स्थापना का यही साक्षात्कार से था, अविद्या अन्धकार हटाने से था, पाषाण पूजा के सर्वथा त्याग से था जो वेद और मनुस्मृति का अडिग स्तम्भ है।

यही वह बिन्दु है जो आर्यों को स्वतन्त्र भारत की राजनीति से अलग किये हुए है, क्योंकि लिखा है – यह राजनीति का अटल सिद्धांत है कि **"सभा वा न प्रवेष्टव्या.... यत्र धर्मो ह्यधर्मेण इत्यादि** "(–मनु.) जिस सभा में अधर्म से धर्म, असत्य से सत्य सब सभासदों के देखते हुए मारा जाता है उस सभा में सब मृतक के समान हैं समझो उनमें कोई भी नहीं जीता। अतः धार्मिक मनुष्य को चाहिए है कि कभी ऐसी सभा में प्रवेश न करे..... इत्यादि।

आर्यों की इस सभा प्रवेश की रुकावट को 2014 के शासक कैसे देखते हैं, क्या परिवर्तन लाते हैं, इसके लिए आर्यगण आशान्वित हैं। यद्यपि संविधान में Secular का अर्थ पंथ निरपेक्ष किया गया है और वास्तव में भारत पंथों का बहुत बड़ा जमावड़ा है, परन्तु उसमें धर्म की व्याख्या नहीं किया जाना दुर्भाग्य पूर्ण है। क्योंकि आर्यों का सार्वभौमिक धर्म है, जिसे कोई पंथ को मानने वाला नकार ही नहीं सकता। यथा **धृति**–धैर्य रखना, **क्षमा**–निन्दा स्तुति मान अपमान में सहनशील होना, **दम**–मन को अधर्म से रोकना–धर्म में लगाना, **अस्तेय**–चोरी त्याग, अर्थात् बिना आज्ञा या छल कपट या विश्वासघात या किसी व्यवहार तथा वेद विरूद्ध उपदेश से पर पदार्थ का ग्रहण करना चोरी और उसको छोड़ देना साहुकारी कहाती है, **शौच** तन–मन की शुद्धि, **इन्दिय निग्रह** रखना, **विद्या**, पृथिवी से लेके परमेश्वर पर्यन्त यथार्थ ज्ञान होना और उनसे यथायोग्य उपकार लेना, **सत्य**–जो पदार्थ जैसा है वैसे ही जानना, बोलना, मानना, **अक्रोध**–क्रोधादि दोषों को छोड़ के शांति आदि गुणो को ग्रहण करना और अंत में **अहिंसा परमो धर्मः** अर्थात् निर्वैरता किसी के विरुद्ध द्वेष आदि छोड़कर वर्त्तना जैसे न्यायकारी न्यायाधीश अथवा न्यायकारी शासक करते हैं वैसा जानबूझकर उलट कार्यवाही न करना। यद्यपि जनसंघ का दल मोरारजी युग, अटल–अडवाणी से होते हुए भाजपा स्वरूप राजनाथ सिंह–मोदी में परिवर्त्तित होकर बृहद् स्वरूप एवं व्यापकता को प्राप्त हुआ है परन्तु सम्पूर्ण क्रॉन्ति जो न इनसे अभी कोसों दूर है, बस यही है **''सत्यमेव जयते नानृतम्''** सत्य का कभी अभाव नहीं होता असत्य का भाव कभी नहीं होता परंतु इसे विद्वान् लोग ही देखते समझते हैं।

किसानों को राजाओं का राजा कहा गया है। ऐसे में वे शासनाध्यक्ष कितने बड़े गुनहगार हैं जिनके राज्य में किसान अपनी रोजी छोड़कर फसल बेचने के लिए, बकाया मूल्य के लिए आन्दोलन में अपना समय जाया करते हैं और जिससे राष्ट्र को अपूरणीय क्षति होती है। ऐसे शासकों को पुरातन काल में जनता (जिसमें आज भी भारत मे 60% कृषक हैं) स्वयं सजा देती थी और उसे 'स्मृति' का भी मार्ग दर्शन इस कार्य मे सहयोग का था।

धिक्कार है ऐसे गवर्नेन्स को जिसमें किसान अर्थात् इन नेताओं के पालन–पोषण कर्त्ता खुदकुशी करते हों, भूखे मरते हों तथा लाचार हों।

तमाम कुचेष्टाओं के बावजूद आज भी हमारा देश कृषि प्रधान है। अतः जैसा कि होना चाहिए हमारे राष्ट्र की इकाई ग्राम हैं। अतः हमें पंचायत और ग्राम को ही पुनजीर्वित करना होगा जो आज अनदेखी से मृतप्राय हैं। बड़े ग्रामों की रचना में भी एकाधिक ग्राम का संयोग है जिसे नगर या राज्य कहा जाता था। परन्तु इसका विकल्प उद्योगों से भरपूर पर्यावरण विनाशक, आधुनिक शहर नहीं होता था न होना चाहिए, अतः हमें नगरों व ग्रामों की पुनरचना करनी होगी।

इसी कड़ी में हमारे संविधान का एक और अनछुआ पहलु है। संविधान 39(क) **समान न्याय और निःशुल्क विधिक सहायता** – "आर्थिक या किसी अन्य अयोग्यता के कारण कोई नागरिक न्याय प्राप्त करने के अवसर से वंचित न रह जाए..." यह कार्य तो अब तक पूर्ण अछूता ही कहा जाएगा और इसे पूर्ण करने के लिए विधिवत् ग्राम पंचायत अथवा मजबूरी में मोहल्ला पंचायत बनाकर ही पूर्ण किया जा सकता है अन्यथा यह पूर्णतया असम्भव है।

अतः *"गुड गवर्नेन्स"* उसी को कहेंगे जिसमें प्रत्येक नागरिक को रोटी, कपड़ा, मकान के साथ ही दैहिक, दैविक और भौतिक तापों अर्थात् कष्टों से छुटकारा व मुक्ति के अनिवार्य साधन सहज प्राप्त हों। जिन्हें हमारे संविधान में "Rich Heritage of our Composit Culture" अर्थात् सामासिक संस्कृति की गौरवशाली परंपरा" कहा गया है। यही शास्त्रों का गहन विषय भी है।

ग्रा. चन्देसरा, उज्जैन (म.प्र.)

☞ पृष्ठ 08 का शेष

कुष्ठ रोगियों के लिए...

की तरह इसके संक्रमण का तत्काल विस्फोट नहीं करता। उसकी गति इतनी मंद होती है कि संक्रमण के दो से पाँच वर्ष बाद ही रोग के लक्षण उभरते हैं और त्वचा पर चकते निकलते है या कान के पास अथवा शरीर के किसी अन्य भाग में गाँठ पड़ जाती है। इससे रोगी को तत्काल किसी प्रकार का कोई कष्ट नहीं होता। फलतः लोग इसकी ओर तत्काल ध्यान नहीं देते। रोग उभरने के बाद भी यह अत्यंत मंद गति से बढ़ता है और पूर्ण रूप से धारण करने में उसे चार–पांच बरस और लग जाते हैं। रोग के विकसित हो जाने के बाद भी रोगी सामान्यतः अपने को इस रोग से ग्रसित होने की कल्पना नहीं कर पाता। वह इस अवस्था में आलस्य, थकान, कार्य करने की क्षमता में कमी, गर्मी और धूप बर्दाश्त न हो सकने की ही शिकायत करता है। जब यह रोग और अधिक बढ़ता है तो धीरे–धीरे मांसमज्जा क्षय (ड्राइ अब्सार्वशन) होने लगता है। जब वह हड्डी तक पहुँच जाता है तो हड्डी भी गलने लगती है और वह गलित कुष्ठ का रूप धारण कर लेता है। कभी जब संवेदना शून्य स्थान में कोई चोट लग जाती है अथवा किसी प्रकार का कट जाता है तो मनुष्य उसका अनुभव नहीं कर पाता, इस प्रकार वह उपेक्षित रह जाता है। इस प्रकार अनजाने ही व्रण का रूप धारण कर लेता है जो कालांतर में गलित कुष्ठ में परिवर्तित हो जाता है।

चिकित्सा :– इस रोग के संबंध में लोगों मे यह गलत धारणा है कि यह असाध्य है। गलित कुष्ठ की वीभत्सता से समाज इतना आक्राँत है कि लोग कुष्ठ के रोगी को घृणा की दृष्टि देखते हैं और उसकी समुचित चिकित्सा नहीं की जाती और उसके साथ अमानवीय व्यवहार किया जाता है। वास्तविकता यह है कि कुष्ठ रोग से कहीं अधिक भयानक यक्ष्मा, हैजा और डिप्थीरिया है। यदि लक्षण प्रकट होते ही कुछ रोग का उपचार आरंभ कर दिया जाए तो इस रोग से मुक्त होना निश्चित है। मनुष्य स्वस्थ होकर अपना सारा कार्य पूर्ववत् कर सकता है। इस प्रकार कुष्ठ रोग होने के साथ–साथ एक सामाजिक समस्या भी है। उपेक्षित रोगी जीवन से निराश होकर प्रायः वाराणसी आदि तीर्थों एवं अन्य स्थानों पर चले जाते हैं जहाँ उन्हें रहने को स्थान और खाने को भोजन आसानी से मिल जाता है। वहाँ के भिक्षुक बनकर घूमते हैं। अतः चिकित्सा व्यवस्था के साथ–साथ यह भी आवश्यक है कि समाज में कुष्ठ के रोगी के प्रति घृणा के भार व दूर हों।

होमियोपैथी उपचार :– होमियोपैथी चिकित्सा पद्धति पूरी तरह से लक्षणों को खोजकर चुनी हुई औषधी देने पर किसी भी प्रकार के रोग पर नियंत्रण पाया जा सकता है, चाहे वो कुष्ठ रोग ही क्यों न हो।

कई रोगियों को होमियोपैथी चिकित्सा कराकर लाभ मिला है, एवं कई रोगियों का इलाज चल रहा है। कई रोगियों के प्रभावित अंगो में स्पर्श संवेदना वापस लाने में और घाव भरने में होमियोपैथिक दवा का चमत्कारिक लाभ मिला है।

पथ्य :– हरी सब्जियाँ, अखरोट, छाछ, गाजर आदि का सेवन करना चाहिए।

अपथ्य :– मसाले वाली चीजे, मांसाहार, अंडा, शराब, मिठाई, गरिष्ठ भोजन नहीं करना चाहिए।

सम्पर्क 9826511983
9425515336

thearyasamaj.org

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11/6066/2012-14
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103/2012-14
POSTED AT N.D.P.S.O. ON 01-02/10/2014
रजिस्ट्रेशन नं. आर० एन० आई० 39/57

डी.ए.वी. इंटरनैशनल अमृतसर में वार्षिक पुरस्कार वितरण समारोह का आयोजन हुआ

डी.ए.वी. इंटरनैशनल स्कूल, अमृतसर में वार्षिक पुरस्कार वितरण उत्सव के अवसर पर भव्य समारोह का आयोजन किया गया। इस अवसर पर श्रीमती (डॉ.) साधना पराशर, निर्देशक, ए. आर.टी. एवं आई. सी.बी.एस.ई., नई दिल्ली, मुख्य मेहमान थी। समारोह में विद्यालय के चेयरमैन डॉ. वी.पी. लखनपाल, प्रबन्धक डॉ. के. एन. कौल एवं श्री जे.के.लूथरा भी विशेष रूप से उपस्थित थे।

मुख्य अतिथि के हार्दिक स्वागत के बाद उन्होंने विद्यालय प्रांगण में पौधारोपण किया और विद्यालय की नवनिर्मित लिफ्ट एवं भोजनालय 'हेल्दी बाइट' का उद्घाटन किया।

समारोह का शुभारंभ दीप प्रज्ज्वलन से हुआ।

प्रिंसीपल अंजना गुप्ता ने विद्यालय की उपलब्धियों का उल्लेख किया और कहा कि विद्यालय की अनवरत प्रगति ही उनका मुख्य ध्येय है।

विद्यालय के 500 छात्र–छात्राओं ने 'लक्ष्य' शीर्षक नाटक के माध्यम से अपनी दर्शकों को मंत्रमुग्ध कर दिया। नाटक में मानव की विकास यात्रा विकास का चित्रण किया गया।

इस अवसर पर विद्यार्थियों ने 'अर्थ सांग' (धरती संगीत) भी प्रस्तुत किया, विभिन्न नृत्य कलाओं के सम्मिश्रण के अन्तर्गत योग की आकर्षक मुद्राएं, पंजाबी गिद्दा, अंग्रेज़ी नृत्य प्रस्तुत किया गया।

मुख्य अतिथि ने 'जल बचाओ' विषय पर आधारित विद्यालय की वार्षिक पत्रिका 'प्रथा' का विमोचन किया। इस अवसर पर विद्यालय की उपलब्धियों पर आधारित सी.डी. का विमोचन भी किया गया। इस सी.डी. में विद्यार्थियों द्वारा वार्षिक परीक्षाओं में शानदार प्रदर्शन के साथ-साथ खेलों और सांस्कृतिक गतिविधियों में अद्वितीय प्रदर्शन का उल्लेख किया गया है।

मुख्य अतिथि ने अपने उद्बोधन में विद्यार्थियों की प्रस्तुति की भूरि–भूरि प्रशंसा की। उन्होंने कहा कि लक्ष्य की प्राप्ति तभी होती है जब हम अपनी सोच को वास्तविक रूप देने में जी जान से जुट जाते हैं। आज हमारे सामने समस्याएं है इन सबका समाधान अच्छी शिक्षा के माध्यम से ही हो सकता है।

विद्यालय के चेयरमैन माननीय डॉ. लखनपाल ने समारोह में उपस्थित सभी अतिथियों का स्वागत किया और कहा कि विद्यार्थियों में जो संस्कार प्रत्यारोपित किए जाते हैं वही उन्हें देश के आदर्श नागरिक बनाते हैं।

मुख्य अतिथि ने शिक्षा, खेलों एवं सांस्कृतिक गतिविधियों में विशिष्ट उपलब्धियाँ प्राप्त करने वाले छात्र छात्राओं को पुरस्कार देकर सम्मानित किया गया। खेलों में अच्छा प्रदर्शन करने वाले विद्यार्थियों को स्वर्गीय डॉ. उर्मिला लखनपाल छात्रवृत्ति और शिक्षा में अच्छा प्रदर्शन करने वाले विद्यार्थियों को स्वर्गीय डॉ. समीन सिंह छात्रवृत्ति के अन्तर्गत नगद पुरस्कार दिए गए।

आर्थिक दृष्टि से कमजोर वर्ग के उत्थान हेतु विद्यालय द्वारा संचालित संस्था नव प्रेरणा के विद्यार्थियों को वर्दियां वितरित की गई एवं नव चेतना संस्था की लड़कियों को आत्मनिर्भर बनाने हेतु सिलाई मशीनें वितरित की गईं।

इस अवसर पर स्थानीय प्रबन्धक समिति के सभी सदस्य तथा नगर के अन्य गणमान्य लोग उपस्थित थे।

डी.ए.वी. अंबाला शहर के प्री-प्राइमरी विंग में विज्ञान प्रदर्शनी आयोजित

अंबाला शहर के मुरलीधर डी.ए.वी. पब्लिक सीनियर सेकेंडरी स्कूल की प्री–प्राइमरी विंग में विज्ञान प्रदर्शनी आयोजित की गई, जिसमें विंग के 200 विद्यार्थियों ने भाग लिया। विद्यार्थियों ने वर्तमान की आवश्यकता–जल संरक्षण, वृक्षारोपण, स्वच्छता, वातावरण की शुद्धता, ग्लोबल वार्मिंग जैसे विषयों पर अपने–अपने प्रारूप प्रदर्शित किये। स्कूल की अध्यापिकाओं एवं अभिभावकों की सहायता से बनाये गये प्रारूपों को उपस्थित अभिभावकों ने सराहा। विंग की इंचार्ज शशि शर्मा ने जानकारी देते हुए बताया कि इस प्रदर्शनी का उदघाटन आईटीआई के प्रिंसिपल अश्वनी शर्मा ने किया। स्कूल के प्रिंसिपल श्री आर.आर सरी ने मुख्यातिथि का स्वागत करते हुए इस प्रदर्शनी के आयोजन के उद्देश्यों का स्पष्ट किया। बच्चों में वैज्ञानिक सोच को अंकुरित करने, वर्तमान की समस्याओं से उन्हें अवगत कराने व उन्हें समस्याओं से परिचित कराने के उद्देश्य से इस प्रदर्शनी का आयोजन किया गया। उन्होंने बताया कि स्कूली बच्चों ने इस प्रदर्शनी में पूरे उत्साह से भाग लिया। बच्चे अपने–अपने मॉडल व चार्ट के बारे में पूरी जानकारी रखते थे। मुख्यातिथि ने स्कूली बच्चों से कुछ प्रश्न किये जिनका उन्होंने पूरी सहजता व सरलता से उत्तर दिया। अश्विनी शर्मा ने स्कूल के प्रिंसिपल श्री आरआर सूरी को बधाई दी कि ये नन्हें बच्चे अपने–अपने विषय की

पूरी जानकारी रखते हैं। उन्होंने बच्चों के लिए उज्ज्वल भविष्य के लिए भी शुभकामनाएं दीं। बच्चों को इस दिशा में प्रेरित करने के लिए अधिक से अधिक पुरस्कार घोषित किये। डॉ. आर.आर सूरी ने स्कूल की अध्यापिकाओं व उनकी इंचार्ज शशि शर्मा को इस सफल आयोजन के लिए बधाई दी।

झज्जर में साप्ताहिक यज्ञ-योग का आयोजन

भारत स्वाभिमान एवं पतंजलि योग समिति जिला झज्जर के तत्त्वावधान में साप्ताहिक यज्ञ–योग का आयोजन मौ. भट्टी गेट पर किया गया जिसमें भजन व प्रवचन का भी कार्यक्रम हुआ। इस कार्यक्रम में यजमान श्रीमती मामकौर एवं महाशय रतीराम आर्य रहे व यज्ञ ब्रह्मा श्री योगाचार्य विवेक जी गोयल रहे। यज्ञ ब्रह्मा ने अपने उपदेश में कहा–यज्ञ की अग्नि हमें ऊपर उठने का व गतिशील रहने का सन्देश देती है। जैसे वायुयान, मोटर गाड़ी व रेल इत्यादि जब तक उनमें अग्नि रहती है तभी तक चलते व उड़ते रहते है, अग्नि समाप्त होते ही उनकी गति समाप्त हो जाती है, मनुष्य को भी अपनी अग्नि को प्रदीप्त रखना चाहिए ताकि

जीवन में उत्थान तथा गतिशीलता बनी रहे। इस कार्यक्रम में राष्ट्र की सुख–शान्ति व समृद्धि के लिए यज्ञ द्वारा कामना की गई।

मुख्यातिथि पं. रमेशचन्द्र कौशिक ने अपने उद्बोधन में कहा कि बेटा अगर जनक है तो बेटी जननी है। हमें समाज की समृद्धि व समानता बनाए रखने के लिए बेटिओं को बचाना होगा व कन्या भ्रूण हत्या को मिटाना बहुत जरुरी है जिसमें सभी का सहयोग बहुत जरुरी है। कार्यक्रम की अध्यक्षता श्री पूर्णसिंह जी देशवाल व मंच का संचालन श्री प्रवीण जी आर्य व ब्र. इन्द्रजीत जी ने किया।

मुद्रक व प्रकाशक – एस.के.शर्मा, सभा मंत्री द्वारा मदन गोयल के प्रबंध में अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि., डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित कार्यालय 'आर्य जगत्' आर्यसमाज भवन, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–110001 से प्रकाशित। स्वामित्व – आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–110001 (दूरभाष : 23362110, 23360059) सम्पादक – श्री पूनम सूरी